THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

JAIN RELIGIOUS READERS SERIES

ॐ

BALBODH JAIN DHARMA 1.

बालबोध जैन-धर्म

[पहला भाग]

लेखक:—

श्रीयुत बाबू दयाचन्दजी गोयलीय, बी. ए.

प्रकाशक:—

बाबू रूपचन्दजी गोयलीय,

मालिक—श्री दयासुधाकर कार्यालय,

गढ़ी अब्दुल्लाखाँ (सहारनपुर)

२२ वी आवृत्ति] 卐 मूल्य -)। आना

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस—सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

अध्यापक महाशयोंसे निवेदन।

यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि बालकोंका हृदय अति कोमल होता है। जो बातें बचपनमें बालकोंके हृदयमें जमा दी जाती हैं उनको वे उमर भर नहीं भूलते हैं। अतएव धार्मिक शिक्षाकी वृद्धिके लिये यह आवश्यक है कि बालकपनमें ही उन्हें प्रत्येक विषय भले प्रकार समझा दिये जायँ। समझानेके लिये सर्वोत्तम मार्ग पुस्तकसे संकेत लेकर उदाहरणोंसे मौखिक शिक्षा देनेका है। क्योंकि ऐसा करनेसे सहज ही में बालकोंकी समझमें आ जाता है और दिल भी लग जाता है। अत आपको भी इसी मार्गका अनुसरण करना उचित है।

जीव, अजीव, त्रस और स्थावरके भेद तसवीरों तथा [illegible] द्वारा अथवा अन्यान्य वस्तुओंसे समझाना चाहिये और प्रत्येक पाठकी समाप्ति पर पुस्तकमें छपे हुए प्रश्न तथा [illegible] प्रकार और और प्रश्न भी विद्यार्थियोंसे पूछना और [illegible] चाहिये।

आपका सेवक,

दयाचन्द गोयलीय, बी० ए०।

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

बालबोध जैनधर्म प्रथम भाग ।

पहिला पाठ ।

णमोकार मंत्र ।

गाथा ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

अर्थ—अरहन्तोंको नमस्कार हो, सिद्धोंको नमस्कार हो, आचार्योंको नमस्कार हो, उपाध्यायोंको नमस्कार हो, और लोकमें सर्वसाधुओंको नमस्कार हो । अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, इन पांचको "पंचपरमेष्ठी" कहते हैं।

णमोकार मंत्रका माहात्म्य ।

एसो पंच णमोयारो* सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ॥ २ ॥

अर्थ—यह पंच नमस्कार मन्त्र सब पापोंका नाश करनेवाला है और सब मंगलोंमें पहला मंगल है।

प्रश्नावली ।

१—णमोकार मन्त्रको शुद्ध पढ़ो ।
२—इस मन्त्रका क्या माहात्म्य है ?
३—इस मन्त्रमें किन किनको नमस्कार किया है ?
४—पंचपरमेष्ठीके नाम बताओ ।

---

* णमुक्कारो तथा णमोक्कारो भी पाठ हैं।

दूसरा पाठ ।

वर्तमान चौवीस तीर्थङ्करोंके नाम ।

१ श्री ऋषभ, २ अजित, ३ संभव, ४ अभिनन्दन, ५ सुमति, ६ पद्मप्रभु, ७ सुपार्श्व, ८ चन्द्रप्रभु, ९ पुष्पदन्त, १० शीतल, ११ श्रेयांन्स, १२ वासुपूज्य, १३ विमल, १४ अनन्त, १५ धर्म, १६ शांति, १७ कुन्थु १८ अर, १९ मल्लि, २० मुनिसुव्रत, २१ नमि, २२ नेमि, २३ पार्श्वनाथ, २४ महावीर ।

तीसरा पाठ।

जीव और अजीव।

जीव–उन्हें कहते हैं जो जीते हों, जिनमें ज्ञान हो, जिनमें जानने देखनेकी ताक़त हो, जैसे-आदमी, घोड़ा, बैल, कीड़े, मकोड़े वग़ैरह।

भावार्थ–जगतमें हम जितने पुरुष, स्त्री, पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े वग़ैरहको खाते, पीते, चलते, फिरते देखते हैं, उन सबमें जीव है।

अजीव–उन्हें कहते हैं जिनमें ज्ञान न हो, जैसे–सूखी मिट्टी, ईंट, पत्थर, लकड़ी, मेज़, कुरसी, क़लम, काग़ज़, टोपी, रोटी वग़ैरह।

जीवके भेद।

जीव दो तरहके होते हैं—एक मुक्त जीव और दूसरे संसारी जीव।

१. मुक्त जीव--उन्हें कहते हैं जो संसारसे छूट गये हैं अर्थात् जिनको मोक्ष होगया है और जिन्होंने सदाके लिये सच्चा सुख पा लिया है और जो कभी संसारमें लौटकर नहीं आते।

२. संसारी जीव वे हैं जो संसारमें घूमकर

जन्म मरणके दुःख उठा रहे हैं। ऐसे जीव त्रस और स्थावर दो तरहके होते हैं।

१. त्रस जीव उन्हें कहते हैं जो अपनी इच्छासे चलते फिरते हों, डरते हों भागते हों, खाना ढूंढ़ते हों, अर्थात् दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पांच इन्द्रिय जीव, जैसे—लट, चिंवटी, मक्खी, घोड़ा, बैल, आदमी वगैरह।

२. स्थावर जीव—अर्थात् एक इन्द्रिय जीव, उन्हें कहते हैं जो पैदा होते हों, बढ़ते हों, मरते हों पर अपने आप चल फिर न सकते हों। जैसे-पृथ्वी (जमीन), अप (पानी), तेज (आग), वायु (हवा) और वनस्पति (पेड़) वगैरह।

चौथा पाठ।

इन्द्रियां।

इन्द्रिय—उसे कहते हैं जिसके द्वारा जीव पहचाना जाये। वे इन्द्रियां पांच होती हैं। १—स्पर्शन इन्द्रिय अर्थात् त्वचा (चमड़ा); २--रसना इन्द्रिय अर्थात् जीभ; ३-घ्राण इन्द्रिय अर्थात् नाक; ४--चक्षु इन्द्रिय अर्थात् आंख; ५—कर्ण इन्द्रिय अर्थात् कान।

१. स्पर्शन इन्द्रिय—उसे कहते हैं जिससे छू जाने पर हलके, भारी, रूखे, चिकने, कड़े, नर्म, ठंड, गर्मका ज्ञान हो। जैसे आग छूनेसे गर्म और पानी छूनेसे ठंडा मालूम होता है।

२. रसना इन्द्रिय--उसे कहते हैं जिससे खट्टे, मीठे, कडुवे, चरपरे और कषायले रस (स्वाद) का ज्ञान हो। जैसे--पेड़ा चखनेसे मीठा, नीमके पत्ते कडुवे मिरच चरपरी और नींबू खट्टा मालूम होता है।

३. घ्राणइन्द्रिय--उसे कहते हैं जिसके द्वारा

सुगन्ध (खुशबू) और दुर्गंध (वदबू) का ज्ञान हो। जैसे-गुलाब केवड़के फूलोंसे सुगन्ध और मिट्टीके तेलसे दुर्गंध आती है।

३ चक्षु इन्द्रिय--उसे कहते हैं जिससे काले, पीले, नीले, लाल, सफेद रंगका तथा उन रंगोंके मेलसे बने हुए तरह तरहके रंगोंका ज्ञान हो। जैसे दूध, दही, चांदी सफेद है, कोयला काला और खून लाल है, सोना पीला और मोरका रंग नीला है।

४ कर्णइन्द्रिय--उसे कहते हैं जिससे आदमी जानवर तथा बाजे वगैरहकी आवाज जानी जाय।

पाँचवाँ पाठ।

पांच तरहके जीव।

एक इन्द्रिय जीव—उनको कहते हैं जिनके सिर्फ एक ही स्पर्शन इन्द्रिय हो। जैसे—मिट्टी, पानी, आग, हवा, फल, फूल, पेड़।

दो इन्द्रिय जीव—उनको कहते हैं जिनके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियां हों। जैसे—लट, केंचुआ, जोंक, शंख वगैरह।

तीन इन्द्रिय जीव—उन्हें कहते हैं जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण ये तीन इन्द्रियां हों। जैसे—चिंवटी, चिंवटा, खटमल, जूं वगैरह।

चार इन्द्रिय जीव—उन्हें कहते हैं जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रियां हों। जैसे—भौंरा, वर्र, ततइया, मक्खी, मच्छर, टिड्डी वगैरह।

पांच इन्द्रिय जीव—उन्हें कहते हैं जिनके पांचों ही इन्द्रियां हों। जैसे—देव, नारकी, मर्द, औरत, बैल, घोड़ा वगैरह।

प्रश्नावली।

१—बतलाओ बैल, कुत्ता, सांप, चिवटी, केंचुआ, लट, हाथी, आग और पानी, इन जीवोंके कौन-कौनसी इन्द्रियां होती हैं?

२—चार इन्द्रिय जीवोंमें दो इन्द्रिय जीवोंसे क्या बात ज्यादा पाई है?

३—जिस जीवके आंख होती है उसके नाक होती है या नहीं और जिसके नाक होती है उसके आंख होती है या नहीं?

४—तुम्हारे कौन-कौनसी इन्द्रियां हैं? स्थावर जीवके कौन कौनसी इन्द्रियां नहीं होती?

५—एक आदमी जन्मसे अन्धा हुआ तो बताओ उसके कौन कौन इन्द्रियां हैं?

आवश्यक निवेदन।

जैन पाठशाला, जैन बोर्डिंग, जैन ... क धार्मिक पठनक्रममें पढ़ाये जानेवाले बालबोध ... चारों भाग, धर्म शिक्षावली चारों भाग, सरल जैनधर्म ... चारों भाग, छ ढाला, रत्नकरंड श्रावकाचार द्रव्यसंग्र ... शास्त्र, नाममाला, जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, क्षत्रचूडामणि ... पाठावली, जैन तीर्थयात्रा दर्शक, न्यायदीपिका, सुभाषित ... सम्यक्तकौमुदी, तथा विशारद एवं शास्त्रीय कक्षाके सभ ... एवं स्वाध्यायोपयोगी सभी पुराण, कथायें, पूजन, भज ... ग्रंथ हमारे ही यहांसे मंगाइये।

हमारे यहा पवित्र काश्मीरी केशर, धूप, अगरबत्ती, मालायें, जनेऊ, जैन झंडा, चांदीके रंगीन व सादे चित्र भी मिलते हैं।

मैनेजर, दिगम्बर जैन पुस्तकालय—सूरत।

विद्यार्थियोंके लिये अत्यंत उपयोगी पुस्तकें।

बालबोध जैनधर्म पहला भाग	-)॥
,, ,, दूसरा भाग	=)
,, ,, तीसरा भाग	≡)॥
,, ,, चौथा भाग	।≡)
श्री जिनवाणी गुटिका (जिनेन्द्र गुण गायन)	।)
रत्नकरण्ड श्रावकाचार सान्वयार्थ	॥)
मोक्षशास्त्र ,,	१॥)
द्रव्य संग्रह ,,	।=)
छहढाला ,,	॥)
छहढाला—दौलतरामजी कृत मूल	-)
मोक्षशास्त्र मूल	=)॥
जिनेन्द्र पंचकल्याणक-पांचों कल्याणक हैं	-)॥
दर्शन पाठ -) आलोचना सामायिक पाठ	-)
जैन सिद्धांत प्रवेशिका ।≡) दर्शन कथा ।-),	।=)
शील कथा ।=) दान कथा =),	।)

नोट—अध्यापकों तथा दुकानदारोंको काफी कमीशन दिया जाता है। एकवार अवश्य मगावें।

पता बाबू रूपचन्द गोयलीय,
श्री दयासुधाकर कार्यालय,
गढ़ी अब्दुल्लाखां (मुजफ्फरनगर)

JAIN RELIGIOUS READERS SERIES.

BALBODH JAINDHARMA II.

बालबोध जैनधर्म

[दूसरा भाग]

लेखक—

श्रीयुत बाबू दयाचन्दजी गोयलीय, बी. ए.

प्रकाशकः—

बाबू रूपचन्दजी गोयलीय,

मालिक- श्री दया सुधाकर कार्यालय,

गढ़ी अब्दुल्लाखाँ (सहारनपुर)

मूल्य =) आना।

अध्यापक महाशयोंसे प्रार्थना।

महाशय! लीजिये "बालबोध जैनधर्म दूसरा भाग" आपकी भेंट है, आशा है कि इसको भी आप पहिले भागकी तरह नवीन रीत्यनुसार बालकोंको पढ़ायेंगे। हमने इस पुस्तकमें कठिन बातोंका सरल भाषामें ऐसी रीतिसे लिखनेका प्रयास किया है कि जिससे खेल-तमाशेके तौरपर हरएक छोटी छोटी उमरके बालकोंको समझमें आ जाय और उनको विषयके जाननेमें कुछ भी कठिनता न हो, जिससे वे बड़े होकर धर्मके मूल विषयोंको सहजमें ही समझने लग जांय। इस कारण आपसे पूर्ण आशा है कि हमारे उद्देश्यों पर विचार करके तथा उनको निज उद्देश बनाकर हमको अनुगृहीत करेंगे।

श्रीवीतरागाय नमः।

बालबोध जैनधर्म।

दूसरा भाग।

पहिला पाठ।

पं० दौलतरामजी कृत स्तुति।

दोहा।

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द रसलीन।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि[1] रज[2] रहस[3] विहीन॥ १॥

पद्धरि छन्द।

जय वीतराग विज्ञानपूर, जय मोह तिमिरको हरन सूर।
जय ज्ञानअनन्तानंतधार, दृग सुख वीरज[4] मंडित अपार॥२॥

१—मोहनीय कर्म। २—ज्ञानावर्णीय तथा दर्शनावर्णीय कर्म।
३—अन्तराय कर्म। ४—अनंत दर्शन अनंत सुख, अनंत वीर्य।

तुमको विन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश ।
पशु नारकनरसुर-गति मंझार, भव धरि धरि मर्‍यो अनंतबार ॥११॥
अब काललब्धि बलतैं दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ।
मन शांत भयो मिट्यो सकलद्वंद, चाख्यो स्वातमरस दुख निकंद॥१२
तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरैं न कभी तुम चरण साथ ।
तुम गुणगणको नहि छेव देव । जगतारनको तुम बिरद एव॥१३॥
आतमके अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय ।
मैं रहूं आपमें आप लीन, सो करो होहुं ज्यो निजाधीन ॥१४॥
मेरे न चाह कुछ और ईश, रत्नत्रयं निधि दीजे मुनीश
मुझ कारजके कारन सु आप, शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥१५
शशि शांतकरन तपहरनहेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।
पीवत पियूष ज्यो रोग जाय, त्यो तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥१६
त्रिभुवन तिहुकाल मझार कोय, नहिं तुम विन निज सुखदायहोय ।
मो उर यह निश्चय भयो आज,दुख जलधि उतारन तुम जहाज॥१७

दोहा ।

तुम गुण गण मणि गणपती, गणत न पावहिं पार ।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमहुँ त्रियोग संभार ॥ १८ ॥

१–भला। २–सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र। ३–चन्द्रमा।
४–अमृत। ५–मनयोग, वचनयोग, कायजोग।

प्रश्नावली ।

(१) इस स्तुतिके बनानेवाले कौन हैं ?

(२) पहिले और अन्तके दोहेको शुद्ध पढ़ो ।

(३) 'आतमके अहित विषय कषाय' इससे आगे अन्त तक पढ़ो ।

(४) आदिसे लेकर 'स्वाभाविक परिणतिमय अछीन' तक पढ़ो ।

(५) इस स्तुतिमें जो पद्य तुमको सबसे प्रिय लगते हों, उनको कहो ।

(६) इस स्तुतिका भावार्थ अपनी भाषामें लिखो ।

(७) स्तुति किसे कहते है और इसके पढ़नेसे क्या लाभ है ?

दूसरा पाठ ।

भूधरदासजी कृत बारह भावना ।

दोहा ।

अनित्य—राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार ।
　　मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार ॥ १ ॥
अशरण—दलबल देई देवता, मात पिता परिवार ।
　　मरती बिरियां जीवको, कोई न राखनहार ॥ २ ॥
संसार—दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।
　　कहूं न सुख संसारमें, सब जग देख्यो छान ॥ ३ ॥

१–[illegible] । २–मरते समय ।

एकत्व—आप अकेला अवतरै[1], मरे अकेला होय।
यों कबहूं या जीवको, साथी सगा न कोय॥ ४॥

अन्यत्व—जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
घर संपत्ति[2] पर प्रकट ये, पर हैं परिजन[3] लोय॥ ५॥

अशुचि—दिपै[4] चाम चादर मढ़ी, हाडपींजरा देह।
भीतर या सम[5] जगतमें, और नहीं घिनगेह[6]॥ ६॥

सोरठा।

आश्रव—मोह नीदके जोर, जगवासी घूमै सदा।
कर्म चोर चहुं ओर, सरवस[7] लूटैं सुधि नहीं॥ ७॥

संवर—सतगुरु देय जगाय, मोहनीद जब उपशमै[8]।
तब कुछ बनै उपाय, कर्म चोर आवत रुकैं॥ ८॥

निर्जरा—ज्ञानदीप[9] तप तेलभर, घर शोधै[10] भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसे नहीं, पैठे पूरब[11] चोर॥ ९॥

पंच महाव्रत संचरन[12], समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय[13], धार निर्जरा सार॥१०॥

१–जन्म लेता है, २–धनादिक, ३–कुटुम्बके लोग, ४–चमकती है, ५–ढाका, ६–घिनावनी, ७–सब कुछ, ८–दबजाय, ९–ज्ञानरूपी दीपक, १०–ढूंढे अर्थात् देखे, ११–पहिलेके बांधे हुए कर्म, १२–चालना, १३–इन्द्रियोंको वशमें करना।

लोक—चौदह राजु[1] उतंग[2] नभ[3], लोक पुरुषसंठान[4] ।
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥११॥

धर्म—जांचे सुरतरु[5] देय सुख, चिंतत चितारैन[6] ।
बिन जांचे बिन चिंतये, धर्म सकल सुखदैन[7] ॥१२॥

बोधिदुर्लभ—धन कन[8] कंचन[9] राजसुख, सबहि सुलभकर[10] जान ।
दुर्लभ है संसारमें, एक जथारथ[11] ज्ञान ॥१३॥

इति बारह भावना ।

तीसरा पाठ।

द्रव्यचर्चा।

(पहिले भागसे आगे)

त्रस जीवोंके भेद।

त्रस जीव चार प्रकारके होते हैः—

१—दोइन्द्रिय जीव, तीनइन्द्रिय जीव, ३—चतुरिन्द्रिय जीव, पंचेन्द्रिय जीव।

नोट—दो इन्द्रिय जीव, तीन इन्द्रिय जीव और चतुरिन्द्रिय जीव इन जीवोंको विकलत्रय कहते हैं।

पंचेन्द्रिय जीवोंमेंसे तिर्यंच पचेन्द्रिय जीव तीन प्रकारके हैंः—

१—जलचर जीव। २—थलचर जीव। ३—नभचर जीव। जलचर जीव उन्हें कहते हैं जो जलमें ही रहे। जैसे—मच्छी, मगरमच्छ इत्यादि।

२—थलचर जीव—उन्हें कहते है, जो पृथ्वीपर चलते-फिरते हों। जैसे गाय, भैंस, कुत्ता, बिल्ली इत्यादि।

३—नभचर जीव—उन्हे कहते हैं जो आकाशमें उड़ा करते हैं। जैसे—तोता, चील, कबूतर इत्यादि।

समस्त पंचेन्द्रिय जीव सैनी, असैनीके भेदसे दो—दो प्रकारके होते हैं। १—सैनी (संज्ञी), २—असैनी (असंज्ञी),

सैनी जीव—उन्हें कहते हैं, जिनके मन हो अर्थात् जो शिक्षा और उपदेश ग्रहण कर सकें। जैसे ऊंट, हाथी, बकरी, मोर, बन्दर इत्यादि पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, देव, नारकी।

असैनी जीव—उन्हें कहते हैं, जिनके मन नहीं हो अर्थात् जो शिक्षा और उपदेश ग्रहण न कर सकें। ऐसे जीव प्रायः माता पिताके रज और वीर्यके संयोगसे पैदा नहीं होते किन्तु [illegible] के संयोगसे पैदा होजाते हैं। जलमें रहने- [illegible] प्रायः असैनी होते हैं, कोई कोई तोता भी असैनी [illegible] हैं।

(५) नीचे लिखे जीवोंमें जलचर जीव कौन कौनसे हैं? हँस, कुत्ता, मुर्गी, चील, कौआ, मेंढक, बगुला।

(६) क्या आकाशमें केवल तिर्यंच पचेन्द्रिय जीव ही उड सकते हैं, और क्या उडनेकी शक्ति रखनेवाले सब जीव नभचर कहलाते हैं?

(७) जो जीव आकाशमें बहुत ऊँचा उडता है और जमीन पर अपना घोंसला बनाता है, वह थलचर है या नभचर?

(८) एक बागमें ३ आमके वृक्षों पर चार कोयलें मीठी मीठी बोल रही है, और उनके पास ही चार गुलाबके पेडों पर ७ भौंरे गूंज रहे हैं, तो बताओ वहां पर कितने असैनी जीव हैं?

चौथा पाठ।

स्थावर जीवोंके भेद।

स्थावर जीव जिनके केवल एक स्पर्शन इन्द्रिय ही होती है, वे पांच प्रकारके होते हैं।

१—पृथ्वीकायिक जीव—अर्थात पृथ्वी ही जिनका शरीर हो। जैसे-मिट्टी, पाषाण अभ्रक (भोडल), रत्न सोना, चांदी

---

१ ये पांच प्रकारके स्थावर जीव और त्रस जीव, इनको षट्कायके जीव कहते हैं।

सैनी जीव-उन्हें कहते हैं, जिनके मन हो अर्थात् जो शिक्षा और उपदेश ग्रहण कर सकें। जैसे ऊंट, हाथी, बकरी, मोर, बन्दर इत्यादि पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, देव, नारकी।

असैनी जीव-उन्हें कहते हैं, जिनके मन नहीं हो अर्थात् जो शिक्षा और उपदेश ग्रहण न कर सकें। ऐसे जीव प्रायः माता पिताके रज और वीर्यके संयोगसे पैदा नहीं होते किन्तु आपसमें एक दूसरेके संयोगसे पैदा होजाते हैं। जलमें रहनेवाले सर्प प्रायः असैनी होते हैं, कोई कोई तोता भी असैनी होता है।

प्रश्नावली।

(१) नीचे लिखे जीवोंमेसे कौन कौन विकलत्रय हैं?
हाथी, घोड़ा, मकोड़ा, मक्खी, भौंरा।

(२) सैनी असैनीमे क्या भेद है, और इनमेंसे तुम कौन हो?

(३) क्या सब पंचेन्द्रिय जीव सैनी होते हैं?
और क्या सब सैनी पंचेन्द्रिय होते हैं?

(४) सैनी जीवके अधिकसे अधिक कितनी इन्द्रियां होती हैं, और कमसेकम कितनी? जिस जीवके आंख नहीं होती, उसमें और सैनी जीवमें क्या भेद है?

१-एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीव तो नियमसे असैनी ही होते हैं।

(५) नीचे लिखे जीवोंमें जलचर जीव कौन कौनसे हैं ? हँस, कुत्ता, मुर्गी, चील, कौआ, मेंढक, बगुला।

(६) क्या आकाशमें केवल तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव ही उड सकते हैं, और क्या उडनेकी शक्ति रखनेवाले सब जीव नभचर कहलाते हैं ?

(७) जो जीव आकाशमें बहुत ऊँचा उडता है और जमीन पर अपना घोंसला बनाता है, वह थलचर है या नभचर ?

(८) एक बागमें ३ आमके वृक्षों पर चार कोयलें मीठी मीठी बोल रही हैं, और उनके पास ही चार गुलाबके पेडों पर ७ मोर गूंज रहे हैं, तो बताओ वहां पर कितने असैनी जीव हैं ?

चौथा पाठ।

स्थावर जीवोंके भेद।

इत्यादि खानसे निकलनेवाली धातुएं, परन्तु उत्पत्ति स्थानसे अलग होने पर उनमें जीव नहीं रहता।

२—जलकायिक जीव—अर्थात् जल ही जिनका शरीर हो। जैसे—जल, ओला, बर्फ, ओस इत्यादि।

३—अग्निकायिक जीव—अर्थात् अग्नि ही जिनका शरीर हो। जैसे—अग्नि।

४—वायुकायिक जीव—अर्थात् वायु ही जिनका शरीर हो। जैसे—हवा।

५—वनस्पतिकायिक जीव—अर्थात् वनस्पति ही जिनका शरीर हो, जैसे—वृक्ष, बेल, फल-फूल, जड़ीबूटी इत्यादि।

ये पांच कायके जीव बादर (स्थूल) और सूक्ष्मके भेदसे दो प्रकारके होते हैं।

प्रश्नावली।

(१) स्थावर जीव कितने प्रकारके होते हैं?

(२) जिस जीवका शरीर हवा है, उसको क्या कहते हैं?

(३) आमके वृक्ष, अंगूरकी बेल, गुलाबके फूल और नीमके पत्ते कौनसे जीव हैं?

(५) एक तालावमें कमलके फूलोंपर भौंरे गूंज रहे हों, तो बताओ वहांपर कौन-कौनसी कायके जीव हैं?

पाँचवाँ पाठ ।

पंच पाप ।

पाप पांच होते हैं । १-हिंसा, २-झूठ, ३-चोरी, ४-कुशील, ५-परिग्रह ।

१-हिंसा-प्रमादसे अपने व दूसरेके प्राणोंको घात करने व दिल दुखानेको हिंसा कहते हैं । इस पापके करनेवालेको हिंसक, निर्दयी, हत्यारा कहते हैं । इसलिये --

जीवनकी करुणा मन धार ।
यह सब धर्मोंमें है सार ॥

२-झूठ-जिस बात या जिस चीजको जैसा देखा हो या जैसा करा हो या जैसा सुना हो, उसको वैसा कहना सो झूठ है । इस पापके करनेवाले झूठे दगाबाज कहलाते हैं । इसलिये -

झूठ वचन मन्द पर मन लाव ।
सांच वचन पर वादर भार ॥

इसलिये—

मालिककी आज्ञा बिन कोय ।
चीज गहे सो चोरी होय ॥
तातैं आज्ञा बिन मत गहो ।
चोरीसे नित डरते रहो ॥

४–कुशील–पराई स्त्रीके साथ रमनेको कुशील कहते हैं। इस पापके करनेवालोंको व्यभिचारी, जार, लुच्चा, बदमाश कहते हैं, और वे लोकमें बुरी नजरसे देखे जाते हैं।

इसलिये—

परदाराके नेह न लगो ।
इससे तुम दूरहिनें भगो ॥

५–परिग्रह–जमीन, मकान, धन, धान्य, गौ, बैल, हाथी, घोड़े, वस्त्र, वर्तन, जेवर इत्यादि चीजोंसे मोह रखना और इन्हीं संसारी चीजोंके इकट्ठे करनेमें लालसा रखना, सो परिग्रह है। इस पापके करनेवालोंको लोभी, बहुधंधी और कञ्जूस कहते हैं। इसलिये—

धन गृहादिमें मूर्छा हरो ।
इनका अति संग्रह मत करो ॥

प्रश्नावली ।

(१) पापोंके नाम बताओ, सबसे बड़ा पाप कौनसा है ?

(२) एक विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थीकी पुस्तक बिना पूछे घर ले गया, बताओ उसने कौनसा पाप किया ?

(३) एक लड़केको कपड़ोंका बहुत शौक है, हररोज नये नये कपड़े बनवाता जाता है तो बताओ तुम उसको क्या कहोगे ?

(४) एक बालकने दूसरे बालकको एक थप्पड़ मारा, अध्यापकने जब उससे पूछा कि क्यों तुमने मारा है ? उसने इन्कार कर दिया, तो बताओ उसने कौनसा पाप किया ?

छठा पाठ।

कषाय ।

कषाय—उसे कहते हैं, जो आत्माको कर्म अर्थात् दुःख दे, ऐसी कषायें चार है—१-क्रोध, २-मान, ३-माया, ४-लोभ ।

१-क्रोध—गुस्सेको कहते हैं ।

२-मान—घमण्डको कहते हैं ।

३-माया—छलकपट करनेको कहते हैं अर्थात् मनमें और, वचनमें और, करे कुछ और ।

४-लोभ—लालच और तृष्णाको कहते हैं। ये चारो ही कषायें पापबन्धकी मुख्य कारण है और जीवको बहुत दुःख देनेवाली हैं ।

तातैं क्रोध कभी मत करो, मान कषाय न मनमें धरो ।
माया मन वच तनतैं हरो, लालचमाहिं कबहु मत परो ॥

प्रश्नावली ।

(१) कषायें कितनी है, नाम सहित बताओ ?

(२) कषायें करनेसे तुम्हारी क्या हानि है ?

(३) लालची और घमण्डी आदमीके कौन कौनसी कषायें होती हैं ?

(४) एक विद्यार्थी जो पढ़ने लिखनेमें बडा चतुर है, दूसरे विद्यार्थीको जो पढ़ने-लिखनेमें कमजोर है, पूछने पर कुछ भी सहायता

नहीं देता उलटा उसकी बुराई और अपनी तारीफ करता है, तो बताओ उसके कौनसी कषाय है ?

(५) गुस्सा करनेसे हिंसा होती है या नहीं ?

(६) माया किसे कहते है ? मायाचारी झूठा होता है या नहीं ?

सातवाँ पाठ ।

गतियां ।

३-मनुष्यगति—कोई भी जीव मरकर मनुष्यका शरीर धारण करे, तो उनको मनुष्यगतिमें जन्म लेना कहते हैं। मनुष्यगतिके जीव पंचेन्द्रिय ही होते हैं ।

४-देवगति—ऊपर कहे हुए तीनो प्रकारके सिवाय एक चौथे प्रकारके जीव होते हैं, जिनको अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम भोगोपभोग प्राप्त होते हैं, और जो रात दिन सुखमें मग्न रहते है, उनको देव कहते है। उन देवोमें मरकर जो कोई जीव जन्म लेवे, तो उनको देवगतिका होना कहते है। इस गतिके जीव पंचेन्द्रिय ही होते है।

प्रश्नावली ।

(१) गति कितनी होती हे नाम सहित बताओ ?

(२) सबसे अच्छी गति कौनसी है और सबसे बुरी कौनसी ?

(३) नरक कितने हैं ? वे जमीनके नीचे है या ऊपर ? वहां रहने-वालोंको दुःख होता है या सुख ?

(४) ये जीव किस गतिमे है—बिल्ली, बैल, मच्छी, नारकी, वृक्ष, मनुष्य, घोडा, बंदर, नौकर, औरत बच्चा, कीडा, देव ।

(५) एक गाय मरकर मनुष्य होगई, तो बताओ पहिले वह किस गतिमें थी और फिर किस गतिमें गई ?

(६) एक जीव नरकसे निकलकर कुत्ता बना, तो बताओ वह अब अच्छा है या पहिले अच्छा था ?

(७) तुम देवगति पसंद करते हो या मनुष्यगति ?

सम्पूर्ण।

३-मनुष्यगति—कोई भी जीव मरकर मनुष्यका शरीर धारण करे, तो उसको मनुष्यगतिमें जन्म लेना कहते है। मनुष्यगतिके जीव पंचेन्द्रिय ही होते हैं।

४-देवगति—ऊपर कहे हुए तीनों प्रकारके सिवाय एक चौथे प्रकारके जीव होते हैं, जिनको अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम भोगोपभोग प्राप्त होते है, और जो रात दिन सुखमें मग्न रहते है, उनको देव कहते है। उन देवोंमें मरकर जो कोई जीव जन्म लेवे, तो उसको देवगतिका होना कहते हैं। इस गतिके जीव पंचेन्द्रिय ही होते है।

प्रश्नावली ।

(१) गति कितनी होती है नाम सहित बताओ ?

(२) सबसे अच्छी गति कौनसी है और सबसे बुरी कौनसी ?

(३) नरक कितने हैं? वे जमीनके नीचे है या ऊपर? वहां रहने-वालोंको दु ख होता है या सुख ?

(४) ये जीव किस गतिमे है—बिल्ली, बैल, मच्छी, नारकी, वृक्ष, मनुष्य, घोडा, बंदर, नौकर, औरत बच्चा, कीडा, देव।

(५) एक गाय मरकर मनुष्य होगई, तो बताओ पहिले वह किस गतिमें थी और फिर किस गतिमें गई ?

(६) एक जीव नरकसे निकलकर कुत्ता बना, तो बताओ वह अब अच्छा है या पहिले अच्छा था ?

(७) तुम देवगति पसंद करते हो या मनुष्यगति ?

सम्पूर्ण।

विद्यार्थियोंके लिये अत्यंत उपयोगी पुस्तकें।

बालबोध जैन धर्म पहला भाग	-)॥
,, ,, दूसरा भाग	=)
,, ,, तीसरा भाग	-)॥
,, ,, चौथा भाग	।=)
श्री जिनवाणी गुटिका (जिनेन्द्र गुण गायन)	।)
रत्नकरण्ड श्रावकाचार सान्वयार्थ	॥)
मोक्षशास्त्र ,,	२)
द्रव्य संग्रह ,,	।=)
छहढाला ,,	॥)
छहढाला—दौलतरामजी कृत	-)॥
आदिनाथ स्तोत्र—(भक्तामर मूल और भाषा)	-)॥
मोक्षशास्त्र अर्थात् तत्त्वार्थसूत्र	=)
जिनेन्द्र पंचकल्याणक—पांचों कल्याणक हैं	-)॥
दर्शन पाठ	-)॥
अहिंसा धर्म प्रकाश	।॥)
जैन सिद्धांत प्रवेशिका	≡)
दर्शन कथा	।-)
शीलकथा	।=)
दानकथा	।)

पता—बाबू रूपचन्द्रजी गोयलीय,
श्री दयासुधाकर कार्यालय,
गढ़ी अब्दुल्लाखां (सहारनपुर)

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस–सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापडियाने मुद्रित किया।

JAIN RELIGIOUS READERS SERIES

BALBODH JAINDHARMA III

बालबोध जैन-धर्म

[तीसरा भाग]

लेखक :—

श्रीयुत बाबू दयाचन्दजी गोयलीय, बी. ए.

प्रकाशक :—

बाबू रूपचन्दजी गोयलीय,

मालिक—श्री दयासुधाकर कार्यालय,

गढ़ी अब्दुल्लाखाँ (सहारनपुर)

२७ वी आवृत्ति] 卐 मूल्य =)॥ आना

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस–सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

समरंभ[1] समारंभ[2] आरंभ[3], मन वच तन कीने प्रारंभ ।
कृत[4] कारित[5] मोदन[6] करिके, क्रोधादि[7] चतुष्टय धरिके ॥ ४ ॥
शत आठ[8] जु इन भेदनतें, अघ[9] कीने परछेदनतें[10] ।
तिनकी कहुँ कोलों[11] कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ॥ ५ ॥
विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके[12] ।
वश होय घोर अघ कीने, वचतें[13] नहिं जात कहीने ॥ ६ ॥
कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदया[14] कर भीनी[15] ।
या विधि मिथ्यात बढ़ायो, चहुँ गतिमें दोष उपायो ॥ ७ ॥
हिंसा पुनि[16] झूठ जु चोरी, परवनितासों[17] दृग[18] जोरी ।
आरंभ परिग्रह भीने, पन[19] पाप जु याविधि[20] कीने ॥ ८ ॥
सपरस[21] रसना घ्राननको, दृग[22] कान विषय सेवनको ।
बहु काम किये मनमाने, कछु न्याय[23] अन्याय[24] न जाने ॥ ९ ॥
फल पंच उदंबर[25] खाये, मधु[26] मांस मद्य[27] चित चाये ।
नहिं अष्ट[28] मूलगुण[29] धारे, सेये कुविसन[30] दुखकारे ॥१०॥

१–किसी कामके करनेका इरादा करना, २–किसी कामके करनेका सामान इकट्ठा करना, ३–किसी कामका शुरू करना, ४–खुद करना, ५–दूसरेसे कराना, ६–दूसरेको करता देखकर खुश होना, ७–क्रोध, मान, माया, लोभ, ८–एकसौ आठ, ९–पाप, १०–दूसरेको दुःख देनेसे, ११–कब तक, १२–विपरीत, एकान्त, विनय, संशय और अज्ञान ये पांच मिथ्यात्व होते हैं, इनका स्वरूप अगली पुस्तकोंमें दिया जायगा। १३–वचनसे, १४–दयाका न होना, १५–भीगी हुई, १६–फिर, १७–परस्त्रीसे, १८–आंख लड़ाना, १९–पांच, २०–इस प्रकार, २१–स्पर्श २२–आंख, २३–योग्य, २४–अयोग्य, २५–पीपल, बड, गूलर, कठूमर, (अंजीर) और पाकर, २६–शहद, २७–शराब, २८–आठ, २९–वे गुण जिनके विना श्रावक नहीं हो सकता, ३०–व्यसन–दुर्गुण, जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, परस्त्रीसेवन, वेश्यासेवन, शिकार खेलना, चोरी करना ।

दुइबीसैं[1] अभक्ष[2] जिन गाये, सो भी निश[3] दिन भुंजाये[4] ।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों कर उदर[5] भरायो ॥११॥
अनन्तानुबन्धी[6] सो जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश[7] गुनिये ॥१२॥
परिहास[8] अरति[9] रति[10] शोग[11] भय ग्लानि[12] त्रिवेद[13] संजोग ।
पनबीसैं[14] जु भेद भये इम[15], इनके वश पाप किये हम ॥१३॥
निद्रावश शयन कराया, सुपनन मधि दोष लगाया ।
फिर जागि विषयवन[16] धायो[17], नानाविध विषफल खायो ॥१४॥
आहार निहार[18] विहारा[19], इनमें नहिं जतन विचारा ।
बिन देखे धरा उठाया, बिन शोधा भोजन खाया ॥१५॥
तब ही परमाद सतायो, बहु विध विकल्प उपजायो ।
कछु सुधिबुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति[20] छाय गयी है ॥१६॥
मर्यादा[21] तुम ढिंग[22] लीनी, ताहूमें दोष जु कीनी ।
भिन्नै[23] भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषै सब पइये ॥१७॥
हा ! हा ! मैं दुठ[24] अपराधी, त्रस जीवनको जु विराधी[25] ।

१–बाईस, २–अभक्ष्य—न खानेयोग्य, ३–रात, ४–खाये, ५-पेट, ६–अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ और प्रत्याख्यान सम्बन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ और अप्रत्याख्यान सम्बन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन सम्बन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ ये १६ कषायें होती हैं, ७–सोलह, ८–हसना, ९–द्वेष, १०–प्रीति, ११–शोक, १२–घिन करना, १३–तीनों वेद–स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद, १४–पच्चीस, १५–इस प्रकार, १६–विषयरूपी वनमें, १७–दौड़ा, १८–शौच जाना या पेशाब करना, १९–इधर उधर फिरना, २०–खोटी बुद्धि, २१-व्रत नियम, २२–तुम्हारे सामने, २३–अलग, २४–दुष्ट, २५–हिंसा करनेवाला ।

थावरकी जतन न कीनी, उरमें[1] करुना नहिं लीनी ॥१८॥
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागा[2] चिनाई ।
बिनगाल्यो[3] पुनि जल ढोल्यो[4], पंखातैं पवन बिलोल्यो[5] ॥१९॥
हा! हा! मैं अदयाचारी[6], बहु हरित जु काय बिदारी[7] ।
या मधि[8] जीवनके खंदा[9], हम खाये धरि आनन्दा ॥२०॥
हा! हा! परमाद बसाई, बिन देखे अग्नि जलाई ।
ता मध्य जीव जे आये, तेहू परलोक सिधाये[10] ॥२१॥
बीधो[11] अन्न[12] राति पिसायो, ईंधन बिन शोधि जलायो ।
झाडू ले जागा बुहारी, चिंटि[13] आदिक जीव बिदारी ॥२२॥
जल छानि जिवानी[14] कीनी, सोहू पुनि डारि जु दीनी ।
नहिं जल थानक पहुँचाई, किरिया[15] बिन पाप उपाई ॥२३॥
जल मलमोरिन[16] गिरवायो, कृमिकुल[17] बहु घात करायो ।
नदियन बिच चीर[18] धुवाये, कोसनके जीव मराये ॥२४॥
अन्नादिक[19] शोध कराई, ता मध्य जीव निसराई[20] ।
तिनको नहिं जतन करायो, गलियारे धूप डरायो ॥२५॥
पुनि द्रव्य[21] कमावन काजै, बहु आरम्भ[22] हिंसा साजै ।

१–चित्तमें, २–जगह, ३–बिना छना हुआ ४–डाला ५–हिलाई, ६–दया नहीं करनेवाला, ७–नष्ट की, ८–इसमें, ९–स्कन्ध समूह, १०–मर गये ११–घुना हुआ, १२–अनाज, १३–चिउंटी, १४–पानी छान लेनेपर छन्नेमें जो जीव रह जाते हैं, यदि किसी बर्तनपर वह छन्ना उलटकर रखद और ऊपरसे छना हुआ पानी डालद तो वे जीव उस पानीके साथ उस बर्तनमें आ जाते है, उसी जीवोंसे भरे हुए पानीको जीवानी कहते हैं। पानी दोहरे छन्नेमें बारीक धारसे छानना चाहिये और छने हुए पानीसे जिवानीको उसी जगह जहांसे पानी लिया है धोकर डाल देना चाहिये। १५–क्रिया यत्न, १६–मोरियोंमें, १७–लट कीडी आदि जीवोंके समूह, १८ वस्त्र १९–अनाज, ह बिनवाना, २०–निकलवाये, २१–रुपया, २२–हिंसाके साज समान ।

कीये तिसनावश भारी, करुना नहिं रंच विचारी ॥२६॥
इत्यादिक पाप अनन्ता, हम कीने श्री भगवन्ता ।
संतत चिरकाल उपाई, बानीतैं कही न जाई ॥२७॥
ताको जु उदै अब आयो, नानाविधि मोहि सतायो[7] ।
फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसे करि गावै ॥२८॥
तुम जानत केवलज्ञानी[9], दुख दूर करो शिवथानी ।
हम तो तुम शरन लही है, जिन तारन विरद सही है ॥२९॥
इक गाँवपती[12] जो होवै, सो भी दुखिया दुख खोवै ।
तुम तीन भुवनके[13] स्वामी, दुख मेटो अन्तरजामी ॥३०॥
द्रौपदिको चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो ।
अञ्जनसे किये अकामी, दुख मेटो अन्तरजामी[15] ॥३१॥
मेरे अवगुण[16] न चितारो[17], प्रभु अपनो विरद निहारो[18] ।
सब दोषरहित कर स्वामी, दुख मेटो अन्तरजामी ॥३२॥
इन्द्रादिक पद नहिं चाहूँ, विषयनमें नहीं लुभाऊँ ।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निज पद दीजे ॥३३॥

दोहा ।

दोषरहित जिनदेवजी, निज पद दीजे मोय ।
सब जीवनके सुख बढ़ै, आनन्द मंगल होय ॥ ३४ ॥

१–तृष्णा अर्थात् लोभ कषायके वश, २–जरा भी, ३–बहुत, ४–लगातार, ५–बहुत काल तक, ६–अनेक प्रकार, ७–दुख दिया, ८–भोगते हुए, ९–संसारके समस्त पदार्थोंको जानने वाले, १०–सिद्ध, ११–कीर्ति, १२–एक गांवका स्वामी, १३–तीनों लोकोंके, १४–इच्छारहित, १५–हृदयकी बात जाननेवाले, १६–दोष, १७–विचारो, १८–देखो, १९–राग द्वेष वगैरह दोष, २०–सिद्धपद ।

अनुभव[1] माणिक[2], पारखी[3], जौहरी आप जिनन्द।
येही वर मोहि दीजिये, चरन शरन आनन्द ॥३५॥

नोट—यह आलोचना पाठ दर्शन और स्तोत्रके पीछे भगवानके दाहिनी ओर सामने बैठकर पढ़ना चाहिये।

प्रश्नावली।

१—आलोचना किसे कहते हैं? इस पाठको कब और क्यों पढ़ना चाहिये?

२—"हा! हा! मै दुठ अपराधी" यहांसे लेकर "हम सायें घरि आनन्दा" तक पढ़ो।

३—आदिके चार छन्द और अन्तके दोहे पढ़ो।

४—पंच उदुम्बर, अष्ट मूलगुण, सप्त व्यसन, पांच मिथ्यात्व, पांच पाप पांच इन्द्रिय, चार गति, सोलह कषाय, इनके केवल नाम बताओ।

५—केवलज्ञानी, अन्तरजामी, अरति, त्रसजीव, परलोक जिवानी, अभक्ष, परमातमपद, इन्द्र इनसे क्या समझते हो?

६—सीता, द्रौपदी और अंजनचोर इनके विषयमें जो कथायें प्रसिद्ध है उन्हें सुनाओ।

७—पाठमें जो "शत आठ जु इन भेदनतें" आया है सो १०८ भेद गिनकर बताओ।

८—इस पाठमें जो छन्द अत्यन्त प्रेम और नम्रता लिये हों, उनको पढ़ो।

१—आत्माका अनुभव, २—एक प्रकारका रत्न, ३—परखनेवाले हैं। हे जिनेन्द्र! आप स्वात्मानुभवरूपी रत्नके परीक्षक जौहरी हैं, मुझे यही वरदान दीजिये कि मै आपके चरणोंकी शरणका आनन्द लेता रहूं।

दूसरा पाठ।

जिनेन्द्र गर्भकल्याणक।

(स्वर्गीय पं० रूपचन्दजी पांडे कृत)

पणविवि[1] पंच परमगुरु, गुरु[2] जिनशासनो।
सकल सिद्धदातार सु, विघन विनाशनो॥
शारद अरु गुरु गौतम[3], सुमति प्रकाशनो।
मंगलकर चउ संघहिं[4], पाप पणासनो॥
पापहि प्रणाशन गुणहि गरुवा[5], दोष अष्टादश[6] रहो।
धर ध्यान कर्मविनाश केवलज्ञान[7] अविचल[8] जिन लहो॥
प्रभु पंचकल्याणक[9] विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं।
त्रैलोक्यनाथ[10] सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ १॥
जाके गरभकल्याणक, धनपति[11] आइयो।
अवधिज्ञान[12] परवान, सु इन्द्र पठाइयो[13]॥
रचि नव बारह योजन, नयरि[14] सुहावनी।
कनक रयणमणि[15] मण्डित, मंदिर अति बनी॥

१—नमस्कार करता हूं, २—महान, ३—श्री महावीरस्वामीके मुख्य गणधरका नाम, ४—मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका—इनके समूहको कहते हैं, ५—बहुत, ६—अठारह दोषरहित, ७—ऐसा ज्ञान जिससे संसारके समस्त पदार्थोंको जाने, ८—अविनाशी, ९—भगवानके गर्भ, जन्म, तप, केवलज्ञान और मोक्ष ये पांच कल्याणक होते हैं अर्थात् इन पांचोंमें ही उत्सव होता है। १०—तीनों लोकोंके स्वामी, ११—कुबेर, १२—एक प्रकारका ज्ञान जिससे मर्यादापूर्वक परोक्ष वस्तु भी प्रत्यक्ष जानते हैं, १३—भेजता है, १४—नगरी, १५—रत्न।

अति घनी पौरि प्रगौरि परिखां, सुमन उपवन सोहगे ।
नर नौरि सुन्दर चतुर भेख सु, देख जन मन मोहगे ॥
तहां जनक गृह छह मास प्रथमहि, रतन धारा वरषियो ।
पुनि रुचिके वासिन जननि सेवा, करहि सब विधि हरषियो ॥ २ ॥

सुर कुंजरसम कुंजर, धवल धुरन्धरो[१०] ।
केहरि[११] केसर शोभित, नखशिख सुन्दरो ॥
कमला कलश न्हवन, दुइ दाम सुहावनी ।
रवि[१५] शशिमण्डल मधुर मीन[१७] जुग पावनी ॥

पावनि कनक घट जुगम पूरण, कमलकलित सरोवरो ।
कल्लोल माला कुलित सागर, सिंहपीठ[२१] मनोहरो ॥
रमणीक अमर विमान फणपति, भवन भुवि छवि छाजये ।
रुचि रत्नराशि दिपन्त दहन सु, तेजपुंज विराजये ॥ ३ ॥

ये सखि सोलह सुपने सूती सयनहीं ।
देखे मांय मनोहर पश्चिम रयनही[२८] ॥
उठि प्रभात[२९] पिय[३०] पूछियो अवधि प्रकाशियो ।
त्रिभुवनपति सुत होसी[३१] फल तिहि भासियो ॥

भासियो फल तिहि चिंति[३२], दंपति, परम आनंदित भये ।
छह मास परि नव मास पुनि तहं, रयनदिन[३३] सुखसो गये ॥

१–कोट दीवार २–खाई, ३–स्त्री, ४–पहिले ही, ५–रुचिकपर्वत पर रहनेवाली देवियां, ६–माता, ७–ऐरावत, हाथीके समान, ८–हाथी, ९–सफेद, १०–बैल, ११–सिंह, १२–गर्दनपरके बालोंसे शोभायमान, १३–कलशोंसे स्नान करती हुई लक्ष्मी, १४–माला, १५–सूर्य, १६–चन्द्रमण्डल, १७–मछली, १८–घडा, १९–कमल सहित, २०–लहरों सहित, २१–सिंहासन, २२–देवोंका विमान, २३–धरणेन्द्रका भवन, २४–अग्नि, २५–सोलह, २६–माता, २७–पिछली, २८–रातमें, २९–सबेरे, ३०–पति, ३१–होगा, ३२–विचार करने, ३३–रात दिन ।

गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भनि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ ४ ॥

इति गर्भकल्याणक।

भावार्थ–गर्भकल्याणक।

जिस समय श्रीतीर्थङ्कर भगवान गर्भमें आते हैं, उससे छः महीने पहिले ही स्वर्गमें इन्द्र कुबेरको भेजता है। कुबेर आकर बड़ी सुन्दर शोभायमान नगरीकी रचना करता है, जिसमें बहुत ही सुन्दर और रत्नमय मंदिर, वन, उपवन होते हैं, जिनको देखकर लोगोंको बड़ा आनन्द होता है। उसी समयसे रत्नोंकी वर्षा होने लगती है और देवियां माताकी सेवा करती है। माताको रात्रिके पिछले भागमें १६ स्वप्न दिखाई देते हैं। वह सबेरे ही उठकर अपने स्वामीसे उनका फल पूछती है। स्वामी उनका फल कहते हैं कि तुम्हारे तीन लोकका स्वामी पुत्र होगा। माता पिता दोनों ही इस बातसे आनंदित होते हैं और भगवान्के जन्मपर्यन्त आनन्दसे समय व्यतीत करते है।

प्रश्नावली।

१–भगवान्के कल्याणक कितने होते है, क्रमसे नामसहित बताओ।

२–भगवान्की माताको कितने स्वप्न दिखाई देते है और किस समय?

३–भगवान्के गर्भमें आनेके समयसे लेकर जन्मसमय तक जो जो होता है, उसको संक्षेपसे कहो।

४—गौतम, पञ्चकल्याणक, अवधिज्ञान, केवलज्ञान, मण-इनके सम्बन्धमें क्या जानते हो ?

५—'पावन कनक घट' से 'देकर' फल तिहिं भाषियो' तक पढ़ो ।

६—भगवानकी माताको जो १६ स्वप्न दिखाई देते हैं, उनके नाम बताओ ।

७—मंगल कब और किस समय गाये जाते हैं?

तीसरा पाठ ।

जिनेन्द्र जन्मकल्याणक ।

मति सुत[1] अवधि विराजित, जिन जब जनमियो ।
तिहुँ लोक भयो छोभित, सुरगण भरमियो ॥
कल्पवासि[2] घर घण्ट, अनाहद[3] बज्जियो ।
जोतिष[4] घर हरिनाद[5], सहज गल[6] गज्जियो ॥
गज्जियो सहजहिं संख भावन[7], भुवन सबद[8] सुहावने ।
विंतर[9] निलय पटुपटह बज्जहिं, कहत महिमा क्यों बने ॥
कम्पित सुरासन अवधिबल जिन, जन्म निहचै जानियो ।
धनराज[10] तब गजराज[11] मायामयी, निरमय[12] आनियो ॥ ५ ॥

१—श्रुतज्ञान, २—कल्पवासी जातिके देव जो १६ स्वर्गोंमें रहते हैं, ३—विना बजाये, ४—ज्योतिषी जातिके देव, ५—सिंहनाद, ६—एक प्रकारका बाजा, ७—भवनवासी जातिके देव, ८—शब्द, ९—व्यन्तर जातिके देवोंके घर, १० कुबेर, ११—हाथी, १२—रत्नाकर ।

जोजन लाख गयंद, वदन सौ निरमये।
वदन वदन वसु दन्त, दन्त सर संठये॥
सर सर सौपणवीस, कमलिनी छाजहीं।
कमलिनि, कमलिनी कमल, पचीस विराजहीं॥
राजहीं कमलिनी कमल अठोत्तर-सौ मनोहर दल बने।
दल दलहि अपछर नटहि नवरस, हाव भाव सुहावने॥
मणि कनक किंकणि वर विचित्र, सु अमर मंडप सोहये।
घन घण्ट चवर ध्वजा पताका, देख त्रिभुवन मोहये॥६॥
तिहि करि हरि चढि आयउ सुर परिवारियो।
पुरहि प्रदच्छन देत सु जिन जयकारियो॥
गुप्त जाय जिन जननिहिं सुख निद्रा रची।
मायामय शिशु राखि, तो जिन आन्यो शची॥
आन्यो शची जिनरूप निरखत, नयन तृपत न हूजिये।
तब परम हरषित हृदय, हरिने सहस लोचन पूजिये॥
पुनि कर प्रणाम सु प्रथम इन्द्र, उछंगधरि प्रभु लीनऊ।
ईशान इन्द्र सु चन्द्र छवि, सिर छत्र प्रभुके दीनऊ॥७॥
सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारहीं।
शेष शक्र जयकार, सबद उचारहीं॥

१—हाथी, २—मुख, ३—एकसौ, ४—आठ, ५—बनाये, ६—एकसौ पचीस, ७—कमलोंकी बेल, ८—एकसौ आठ, ९—हाथीपर, १०—परिवारसहित, ११—प्रदक्षिणा, १२—प्रसूतिस्थानमें, १३—भगवानकी माताको, १४—बालक, १५—भगवानको, १६—इन्द्राणी, १७—हजार नेत्र, १८—बनाये, १९—पहले सौधर्म स्वर्गका इन्द्र, २०—गोद, २१—दूसरे स्वर्गके इन्द्रका नाम २२—तीसरे स्वर्गके इन्द्रका नाम, २३—चौथेस्वर्गके इन्द्रका नाम, २४—इन्द्र, २५—शब्द।

उच्छव सहित चतुरविधि, सुर हरषित भये।
जोजन सहस निन्यानवे, गगन उलंघि गये॥

लंघि गये सुरगिरि जहां पांडुक-वन विचित्र विराजहीं।
पांडुक-शिला तहां अर्द्धचन्द्र. समान मणि छवि छाजहीं॥
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊँची गनी।
वर अष्टमंगल कनक कलशनि, सिंहपीठ सुहावनी॥८॥

रचि मणिमण्डप शोभित मध्य सिंहासनो।
थाप्यो पूरव मुख तहां प्रभु कमलासनो॥
बाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा बने।
दुन्दुभि प्रमुख मधुर धुनि, और जु बाजने॥

१—चारों प्रकारके देव भवनवासी, व्यन्तर ज्योतिष्क और कल्पवासी, २—सुमेरुपर्वत एक लाख योजन ऊंचा है, उसमेंसे एक हजार योजन जमीनके भीतर है और ९९ हजार योजनकी ऊँचाई पर पांडुक-वन है, ३—आकाश, ४—५ इस जम्बूद्वीपके मध्यभागमें एक लाख योजन ऊंचा सुमेरु पर्वत है। जिसमेंसे हजार योजन जमीनके भीतर है। जमीनपर भद्रसाल वन है। पांचसौ योजन ऊंचा नन्दनवन है। इससे बासठ हजार पांचसौ योजन ऊँचा सौमनस वन और फिर छत्तीस हजार योजन ऊँचा पाडुकवन है। इसी वनके मध्यभागमें चारों दिशाओंमें एक एक स्फटिकमणिकी शिला पडी हुई है, जिनका नाम पाडुक शिला है। वे शिलाएं अष्टमंगल द्रव्य और तोरण आदिकोंसे सुशोभित है। इनपर रत्नजडित स्वर्णमयी सिंहासन रक्खे हुए है, जिनपर भगवानका अभिषेक होता है। भरतक्षेत्रमें उत्पन्न हुए तीर्थङ्करका अभिषेक दक्षिण दिशाकी पाडुक शिलापर होता है, ६—वह शिला १०० योजन लम्बी, ५० योजन चौडी, ८ योजन ऊँची है, ७—दुगुणी लम्बी, ८—आठ, ९—अष्टमंगलद्रव्य, १०—पद्मासन ११—बाजे।

बाजने बाजहि शची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं।
पुनि करहि नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं॥
भरि क्षीरसागर जल जु हाथहि, हाथ सुरगन ल्यावहीं।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र सु, कलश ले प्रभु न्यावहीं॥९॥

वदन-उदर अवगाह, कलशगत जानिये।
एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये॥
सहस अठोत्तर कलशा, प्रभुके सिर ढरै।
पुनि शृङ्गार-प्रमुख, आचार सबै करै॥

करि प्रकट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहि दयो।
धनपतिहि सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहि गयो॥
जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भन रूपचन्द सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥१०॥

भावार्थ-जन्मकल्याणक।

जिस समय मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान संयुक्त श्री तीर्थंकर भगवानका जन्म होता है, उस समय तीनों लोकमें आनन्द होजाता है। इस समय इन्द्रका आसन कंपायमान होता है, जिससे वह जानता है कि भगवानका जन्म हुआ। इसी समय कुबेर एक बड़ा सुन्दर मायामयी ऐरावत हाथी बनाता है, जिसकी शोभा बड़ी ही अद्भुत होती है। इन्द्र उस हाथीपर

१-देवांगना, २-पांचवां समुद्र, जिसका जल दूधके समान है, ३-कलशोंका मुंह एक योजन, पेट चार योजन और ऊंचाई आठ योजन, ४-एक हजार आठ, ५-वस्त्राभूषण पहिनाना आदि ६-माताको।

चढ़कर परिवार सहित आता है और जयजय शब्द करता हुआ नगरकी प्रदक्षिणा देता है। इन्द्राणी प्रसूतिगृहमें जाकर भगवानकी माताको मायासे सुला देती है और फिर वहां वैसा ही मायामयी बालक रखकर भगवानको बाहर ले आती है। जब इन्द्र भगवानका रूप देखता हुआ तृप्त नहीं होता है, तब हजार आंखें बनाता है पहिला सौधर्म इन्द्र भगवानको प्रणाम कर गोदमें लेता है। दूसरा ईशान इन्द्र छत्र लगाता है। तीसरे चौथे स्वर्गके इन्द्र चमर ढोरते है और बाकी इन्द्र जय जय शब्द उच्चारण करते है।

इस प्रकार चारों प्रकारके देव परम हर्षित हो, बड़े उत्सवसे भगवानको ऐरावत हाथीपर विराजमान कर मेरुपर्वत पर ले जाते है और वहांकी पांडुक शिलापर रक्खे हुए रत्नमयी सिंहासन पर विराजमान करते है। उस समय अनेक प्रकारके बाजे बजते हैं, इन्द्राणी मंगल गाती है और देवांगनाएँ नृत्य करती है। देवगण हाथोहाथ क्षीरसमुद्रसे कलशे भरकर लाते है और सौधर्म और ईशान इन्द्र भगवानका अभिषेक करते हैं। फिर भगवानको वस्त्राभूषण पहना कर आनंद-उत्सवसे लौटते है। इन्द्र भगवानको माताकी गोदमें देता है और उनकी सेवाके लिये कुबेरको छोडकर आप अपने स्थानको चला जाता है।

प्रश्नावली।

१—भगवान्‌को जन्मसे ही कौन कौनसे ज्ञान होते हैं और इन्द्रको भगवान्‌का होना कैसे मालूम होता है?

२—भगवान्के जन्म समय क्या होता है और इन्द्र क्या करता है?

३—जन्म हुए पीछे भगवान्को कौन बाहर लाता है और किस प्रकार?

४—भगवान्को मेरुपर्वत पर ले जाकर क्या करते हैं?

५—इनके सम्बन्धमें क्या जानते हो—अवधिबल, ऐरावत, जोजन, सनतकुमार, पाण्डुक वन पांडुक शिला, क्षीरसागर सुरपति, धनपति, सुमेरुपर्वत।

६—आदिसे लेकर 'कमल पचीस विराजहीं' तक और 'वदन उदर अवगाह' से लेकर अन्त तक पढो।

७—इन मंगलोंके बनानेवाले कौन हैं? वे मुनि थे या श्रावक? क्या किसी स्थान पर उन्होंने अपना नाम प्रकट किया है?

चौथा पाठ।

अजीवके भेद।

अजीव पांच प्रकारके होते हैः—

१—पुद्गल, २—धर्म, ३—अधर्म ४—आकाश, ५—काल।

१—पुद्गल, उसे कहते है, जिसमें स्पर्श[1], रस, गन्ध और वर्ण पाये जावें। पुद्गलके कई भेद हैं। स्थूल (मोटा) पुद्गल तो आंखोसे देखनेमें आता है, परन्तु सूक्ष्म (बारीक) पुद्गल नहीं दिखाई देता। पुद्गलके सबसे छोटे टुकड़ेको परमाणु

१—स्पर्श, रस, गन्ध, वर्णका पाठ आगे दिया गया है।

कहते हैं। दो या दोसे ज्यादा मिले हुए पुद्गल परमाणुओंको स्कन्ध कहते हैं। धूप, छाया, अन्धेरा, चान्दनी सब पुद्गलकी पर्यायें (हालतें) हैं।

२—धर्म द्रव्य उसे कहते है, जो जीव और पुद्गलोंके चलनेमें सहकारी हो, अर्थात यह पदार्थ तमाम लोकमे पाया जाता है और अपनी आंखोसे देखनेमें नहीं आता।

३—अधर्म द्रव्य उसे कहते हैं, जो जीव और पुद्गलोंके ठहरनेमें सहकारी हो। जैसे पेडकी छाया थके हुए मुसाफिरोंको ठहरनेमें सहकारी है। यह पदार्थ तमाम लोकमे पाया जाता है और अपनी आंखोसे देखनेमें नहीं आता।

धर्म अधर्म द्रव्य जीव पुद्गलको प्रेरणा करके चलाते या ठहराते नहीं हैं, परन्तु जब वे चलते हैं अथवा ठहरते है उस-समय उनकी मदद करते हैं। हां, यह जरूर है कि यदि धर्म द्रव्य न हो तो कोई पदार्थ ठहर नहीं सकता। यहां धर्म-अधर्मसे साधारण धर्म अधर्म न समझना चाहिये जिनके अर्थ पुण्य पापके हैं।

४—आकाश उसे कहते हैं, जो अन्य चीजोंको अवकाश

नोट—पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन पाच प्रकारके अजीवोंमें एक जीव द्रव्य और मिलानेसे छ. द्रव्य होजाते हैं। इन छहों द्रव्योंमेंसे काल द्रव्यको छोडकर शेष पांच द्रव्य पञ्चास्तिकाय कहलाते है। कालद्रव्य कायवान नहीं है। उसका एक एक अणु अलग अलग है।

(स्थान) दे, अर्थात् यह वह पदार्थ है, जिसमें सब चीजें रहती हैं।

इसके दो भेद हैं—१—लोकाकाश, २—अलोकाकाश। लोकाकाशमें जीव, अजीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म वगैरह सब चीजें पाई जाती हैं, परन्तु अलोकाकाशमें केवल आकाश ही आकाश है, और कुछ नहीं।

५—काल उसे कहते हैं, जो चीजोंकी हालतोंके बदलनेमें मदद देता है। व्यवहारमें पल, घड़ी, पहर, दिन, सप्ताह (हफ्ता), पक्ष (पन्द्रहवाड़ा), मास, वर्ष वगैरहको काल कहते हैं।

प्रश्नावली।

१—कौन कौन द्रव्य लोकमें पाये जाते हैं? क्या अलोकमें भी कोई द्रव्य है?

२—आकाशके कितने भेद हैं? नाम सहित बताओ। जहां हम बैठे हुए हैं, वहांपर आकाश द्रव्य है या नहीं?

३—उन द्रव्योंके नाम बताओ जिनमें चेतना पाई जाती है।

४—यदि धर्म द्रव्य न हो, तो क्या हम चल सकते हैं?

५—अजीवके कितने भेद हैं और उनमेंसे कौन सर्वत्र पाया जाता है?

६—क्या यह जरूरी है कि छहों द्रव्य एक स्थान पर हों? कोई ऐसा स्थान भी है, जहां केवल एक या दो द्रव्य ही हों?

७—पंचास्तिकायका नाम बताओ।

८—अन्धेरा, चांदनी शब्द, वृक्ष, धूप, छाया, वायु कौनसे तत्त्व हैं?

९—अणु और स्कन्धमें क्या भेद है?

पाँचवाँ पाठ ।

रूप, रस, गन्ध, स्पर्श ।

रूप, रस, गंध और स्पर्श ये पुद्गलके गुण हैं । ये सदा पुद्गलमें ही पाये जाते है । पुद्गलको छोडकर और किसी द्रव्यमें नहीं रहते । ये चारों ही सदा साथ साथ रहते हैं । जैसे पके हुए आममें पीला रूप है, मीठा रस है, अच्छी गन्ध है और कोमल स्पर्श है ।

रूप उसे कहते हैं, जो नेत्र इन्द्रियसे जाना जाय । वह पांच प्रकारका होता है—कृष्ण (काला), नील (नीला), रक्त (लाल), पीत (पीला) और श्वेत (सफेद) जैसा—कोयलेमें काला, नीलमें नीला, गेरुमें लाल, सोनेमें पीला और दूधमें सफेद रूप है ।

रूपका दूसरा नाम रंग है । इन रंगोंके मिलानेसे और भी कई तरहके रंग हो जाते हैं । जैसे नीला और पीला रंग मिलानेसे हरा रंग बन जाता है ।

रस उसे कहते है, जो रसना (जिह्वा) इन्द्रियसे जाना जाय । रस पांच प्रकारका होता है—तिक्त (तीखा) अथवा चर्परा, कटु (कडवा), कषायला (कसैला), अम्ल (खट्टा) और मधुर (मीठा) । जैसे—मिर्चमें तीखा, नीममें कडुआ, आंवलेमें कसैला, नीबूमें खट्टा और गन्नेमें मीठा रस होता है ।

गंध उसे कहते है, जो घ्राण (नासिका) इन्द्रियसे जानी जाय । गंध दो प्रकारकी होती है—सुगंध (खुशबू) और

दुर्गंध (बदबू) जैसे—गुलाबके फूलमें सुगंध और मिट्टीके तेलमें दुर्गंध होती है।

स्पर्श उसे कहते है, जो स्पर्शन इन्द्रियसे या छूनेसे जाना जाय। स्पर्श आठ प्रकारका होता है—स्निग्ध (चिकना), रूक्ष (रूखा), शीत (ठंडा), उष्ण (गर्म) और लघु (हलका) जैसे घीमें स्निग्ध, बालूमें रूक्ष, पानीमें शीत, अग्निमें उष्ण, मक्खनमें मृदु, पत्थरमें कर्कश, लोहेमें गुरु और रूईमें लघु स्पर्श रहता है।

रूप ५, रस ५, गंध २ और स्पर्श ८ इसप्रकार सब मिलकर पुद्गलमें २० गुण होते हैं।

प्रश्नावली।

१—रूप और स्पर्शमें क्या भेद है? जिस वस्तुमें रस होता है, उसमें स्पर्श होता है या नहीं?

२—किसी ऐसी वस्तुका नाम लो, जिसमें रूप, रस, स्पर्श न पाए जावें।

३—रूप और रसके कितने भेद है? नीचे लिखे हुओंमें कौन कौन गुण हैं? पत्थर, तांबा, अंगूर, लकड़ी, तिनका, ओला, इत्र, दही।

४—वायुमें कैसा स्पर्श है? धूप, चांदनी और अंधेरेमें कैसा रूप है? जलमें कैसी गंध है? और घीमें कैसा रस है?

५—नीचे लिखे गुण किन किन इन्द्रियोंसे जाने जाते हैं?— मधुर, रूक्ष, पीत, शीत, कटु और मृदु।

६—किसी ऐसी चीजका नाम लो जिसमें सफेद रूप हो, स्निग्ध स्पर्श हो, खट्टा रस हो और गंध कुछ बुरी हो ।

७—छः द्रव्योंमें कौन कौन द्रव्य रूपी हैं ?

छठा पाठ ।

आठ कर्म ।

कर्म उन्हें कहते हैं, जो आत्माका असली स्वभाव प्रकट न होने दें। जैसे बहुतसी धूल मिट्टी उडकर सूरजकी रोशनीको ढक देती है, उसी प्रकार बहुतसे पुद्गल परमाणु (छोटे २ टुकड़े) जो इस आकाशमें सब जगह भरे हुए हैं—आत्मामें क्रोध आदि कषाय उत्पन्न होनेसे आत्माके प्रदेशोंके साथ मिलकर आत्माका स्वरूप ढक देते हैं। कषायके सम्बन्धसे उनमें सुख दुख वगैरह देनेकी शक्ति भी हो जाती है, इसलिए उनको कर्म कहते हैं।

कर्म आठ हैं—ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय ।

ज्ञानावरणी कर्म उसे कहते हैं, जो आत्माके ज्ञान गुणको प्रकट न होने दे। जैसे—एक प्रतिमा पर परदा डाल दिया गया, अब वह परदा प्रतिमाको ढके हुए है—प्रकट नहीं होने देता। इसी प्रकार ज्ञानावरणी कर्म ज्ञानको ढक लेता है, प्रकट नहीं होने देता। जैसे मोहन अपना पाठ खूब

याद करता है, परन्तु उसे याद नहीं होता। इसमें मोहनके ज्ञानावरणी कर्मका उदय समझना चाहिये।

किसीके पढ़नेमें विघ्न डालना, किसीकी पुस्तक फाड़ देना, छुपा देना, किसीको न बताना, अपने गुरु अथवा और किसी विद्वानकी निन्दा करना, अपने ज्ञानका गर्व करना, विद्या पढनेमें आलस्य करना, झूठा उपदेश देना वगैरह कामोंसे ज्ञानावरणी कर्म बंधता है अर्थात ज्ञानका प्रकाश नहीं होता. किन्तु इनसे विपरीत करनेसे ज्ञानका प्रकाश होता है।

दर्शनावरणी कर्म उसे कहते है, जो आत्माके दर्शन गुणको प्रकट न होने दे। जैसे—एक राजाका पहरेदार पहरेपर बैठा हुआ है, वह किसीको भी अन्दर जाकर राजाके दर्शन नहीं करने देता, सबको बाहरसे ही रोक देता है, इसी प्रकार दर्शनावरणी कर्म किसीको दर्शन नहीं होने देता। जैसे-मोहन मंदिरमें दर्शन करनेके लिये गया था, परन्तु मन्दिरका ताला लगा पाया। इससे समझना चाहिये कि मोहनके दर्शनावरणी कर्मका उदय है।

किसीके देखनेमे विघ्न करना, स्वयं देखे हुए पदार्थको प्रकट न करना, अपने पासकी वस्तु दूसरोको न दिखाना, अपनी दृष्टिका गर्व करना, दिनमे सोना, दूसरेकी आंखें फोडना, मुनियोको देखकर ग्लानि करना और धर्मात्माको दोष लगाना ऐसे कर्मोंसे दर्शनावरणी कर्म बंधता है और इनके विपरीत करनेसे आत्माका दर्शन गुण प्रकट होता है।

वेदनीय कर्म उसे कहते हैं, जो आत्माको सुख दुःख दे। इस कर्मके उदयसे संसारी जीवोंको ऐसी चीजोंका मिलाप होता है जिसके कारण वह सुख दुःख मालूम करते हैं। जैसे— शहद लपेटी तलवारकी धार चाटनेसे सुख दुःख दोनों होते हैं। अर्थात शहद मीठा लगता है, इससे सुख होता है, परंतु तलवारकी धारसे जीभ कट जाती है इससे दुःख होता है। इसी प्रकार वेदनीय कर्म सुख दुःख दोनों देता है। प्रकाश-चन्द्रने लड्डू खाया, अच्छा लगा और उसमें कांटा गड़ गया, दुःख हुआ—दोनों ही हालतोंमें वेदनीय कर्मका ही उदय समझना चाहिये। जिससे सुख होता है, उसे सातावेदनीय कहते हैं।

दुःख करना, शोक करना, पश्चात्ताप[1] करना, रोना, मारना, पीटना ऐसे कर्मोंसे असाता (दुःख देनेवाले) वेदनीय कर्मका बंध होता है।

सब जीवोंपर दया करना, व्रत पालना, लोभ नहीं करना, क्षमा धारण करना, दान देना, ऐसे कामोंसे साता (सुख देनेवाले) वेदनीय कर्मका बन्ध होता है।

मोहनीय कर्म उसे कहते हैं, जिसके उदयसे यह आत्मा अपनेको भूल जाय और अपनेसे जुदी चीजोंमें लुभा जावे। जैसे—शराब पीनेवाला शराब पीकर अपनेको भूल जाता

१—परीक्षामें अथवा और किसीमें सफलता न होनेपर अथवा किसीसे हार जानेपर पछताना।

है, उसे भले बुरेका कुछ भी ज्ञान नहीं रहता और न वह भाई बहिन स्त्री पुत्रादिको पहचान सकता है। इसी प्रकार मोहनीय कर्म इस जीवको भुला देता है। मोहनीय कर्मके उदयसे इस जीवको अपने भले बुरेका कुछ भी ज्ञान नहीं रहता और न वह बुरे कामसे डरता है। काम, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि सब मोहनीय कर्मके उदयसे होते हैं। सोहनने क्रोधमें आकर मोहनको मार डाला, रामने लोभमें आकर गोविन्दके मालको लूट लिया, इससे समझना चाहिये कि सोहन और रामके मोहनीय कर्मका उदय है।

सच्चे देव शास्त्र गुरुको दोष लगानेसे व काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, हिंसा वगैरह करनेसे मोहनीय कर्म बंधता है।

आयु कर्म उसे कहते है, जो आत्माको नरक, तिर्यंच मनुष्य और देव शरीरोंमेंसे किसी एकमें रोक रक्खे। इस कर्मके कारण जीव इस संसारमें नानाप्रकारकी योनियोंमें भ्रमण करता हुआ काल व्यतीत करता है।

जैसे—एक मनुष्यका पैर काठमें (खोड़ेमें) फँसा हुआ है। अब वह काठ उस मनुष्यको उस स्थान पर रोके हुए है। जबतक उसका पैर काठमें फँसा रहेगा, तबतक मनुष्य दूसरी जगह नहीं जा सकता। इसी प्रकार आयु कर्म इस जीवको मनुष्य आदिके शरीरमें रोके हुए है। जब तक वह आयु कर्म रहेगा, तब तक यह जीव उसी शरीरमें रहेगा। हमारा इस मनुष्य-शरीरमे रुका हुआ है, इसलिये समझना चा

हमारे मनुष्य आयु कर्मका उदय है और घोड़ेका जीव तिर्यञ्च शरीरमे रुका हुआ है, उसके तिर्यञ्च आयु कर्मका उदय है।

बहुत हिंसा करनेसे, बहुत आरंभ और परिग्रह रखनेसे नरक आयु बंधती है, अर्थात ऐसा करनेसे यह जीव नरकमें जाता है।

छल कपट करनेसे तिर्यञ्च होता है।

थोडा आरंभ और थोडा परिग्रह रखनेसे मनुष्य होता है।

व्रत उपवास करनेसे, शांति-पूर्वक भूख, प्यास, गर्मी, और सर्दीकी बाधा सहन करनेसे देव होता है।

नाम कर्म उसे कहते है, जो आत्माको अनेक प्रकार परिणमावे, अर्थात जिसके उदय होनेसे तरह तरहका शरीर और उसके अंगोपांग बने जैसे चित्रकार (चितेरा) अनेक प्रकारके चित्र बनाता है। कोई मनुष्यका, कोई हाथीका, कोई स्त्रीका, कोई बैलका, किसीका हाथ लम्बा, किसीका छोटा, कोई कुबडा, कोई बौना। इसी प्रकार नाम कर्म इस जीवको कभी सुन्दर, कभी चपटी नाकवाला, कभी लम्बे दांतवाला, कभी कुबडा, कभी बौना, कभी काला, कभी गोरा, कभी सुरीली आवाजवाला, कभी मोटी आवाजवाला अनेक रूपसे परिणमाता है। हमारा शरीर और आंख नाक कान वगैरह सब नाम कर्मके उदसे बने है।

घमण्ड करना, आपसमें लड़ना, झूठे देवोंको पूजना, चुगली खाना, किसीकी नकल करना, किसीका बुरा

सोचना वगैरह कामोसे अशुभ नामकर्म बंधता है।

आपसमें मिलकर रहना, धर्मात्माको देखकर खुश होना, न कभी किसीका बुरा सोचना, न बुरा करना, मन वचन कायको सरल रखना, ऐसे कर्मोंसे शुभ नामकर्म बंधता है।

गोत्र कर्म उसे कहते हैं, जो इस जीवको ऊंचे अथवा नीचे कुलमें पैदा करे। जैसे कुम्हार छोटे बड़े सब तरहके बर्तन बनाता है, उसी प्रकार गोत्र कर्म इस जीवको ऊंचा अथवा नीचा बना देता है। उच्च गोत्रके उदयसे अच्छे चारित्रवाले लोकमान्य कुलमें पैदा होता है और नीच गोत्रके उदय होनेसे खोटे आचरणवाले लोकनिंद्य कुलमें पैदा होता है, जहां हिंसा, झूठ, चोरी वगैरह बुरे कर्म करता है।

दूसरेकी निन्दा और अपनी प्रशंसा करनेसे, देव गुरु शास्त्रका अविनय करनेसे, अपनी, जाति, कुल, रूप, विद्याका घमण्ड करनेसे नीच गोत्र बंधता है।

दूसरोंकी प्रशंसा करने, स्वयं विनीत भावसे रहने और अहंकार नहीं करनेसे नीच गोत्र बंधता है।

अन्तराय कर्म उसे कहते हैं, जिसके उदयसे किसी कार्यमें विघ्न आजाय अथवा जो किसी कार्यमें विघ्न डाले। जैसे किसी महाराजने किसी विद्यार्थीके लिये १००) रु० देनेकी आज्ञा दी, परन्तु खजांची साहबने कुछ गड़बड़ करके अथवा कुछ बहाना बना करके वह रुपया नहीं दिया। अर्थात् विद्यार्थीके सौ रुपये मिलनेसे खजांची साहब विघ्नरूप होगए। इसी प्रकार

अन्तराय कर्म कार्योंमें विघ्न किया करता है। मोहन रोटी खा रहा था, अकस्मात बन्दर आकर हाथसे रोटी छीन ले गया, तो मोहनके अन्तराय कर्मका उदय समझना चाहिये।

किसीको लाभ होता हो उसे न होने देना, बालकोंको विद्या न पढ़ाना, अपने आधीन नौकर चाकरको धर्म सेवन न करने देना, दान देते हुएको रोक देना, दूसरेकी भोगने योग्य वस्तुओंको बिगाड़ देना, ऐसे कामोंसे अन्तराय कर्म बंधता है।

प्रश्नावली।

१—हमको मनुष्य किसने किया और तुम्हारे मुंह, नाक, कान किसने बनाये?

२—कर्म किसे कहते हैं? इनमे फल देनेकी शक्ति कैसे पैदा हो जाती है?

३—सबसे बुरा कर्म कौनसा है? और तुम्हारे इस समय कौन कौन कर्मोंका आवरण है?

४—असातावेदनीय, ज्ञानावरणी और गोत्र कर्मके बन्धके कौन कौन कारण हैं?

५—सातावेदनीय, दर्शनावरणीय और मोहनीय कर्म क्या क्या काम करते हैं?

६—बताओ इनके किस कर्मका उदय है?

(क) यद्यपि गोपाल धर्मका स्वरूप सच कहता है, तथापि लोग उसकी निन्दा करते हैं।

(ख) राम सुबहसे लेकर शाम तक पाठ याद करता है, परन्तु उसे याद नहीं होता।

(ग) मोहन सदा रोगी और दुखी रहता है।

(घ) शंकर एक एक पैसेके लिये जान देता है।

(ङ) कुन्दनको आग खानेका बड़ा शौक है।

(च) मोहन दिनभर सोता रहता है।

(छ) अर्जुन चार सालसे हवालातमें पड़ा हुआ दुःख भोग रहा है।

७—बताओ इनके किस किस कर्मका बन्ध हुआ—

(क) रामने अपने लड़केको पाठशालासे हटा लिया और पाठशालाको नष्ट भ्रष्ट कर दिया।

(ख) मोहन बड़ा मानी है, उसने एक सत्यवक्ता पंडितका बड़ा अनादर किया।

(ग) एक विद्यार्थीने परीक्षामें पास न होनेपर बड़ा रुदन किया और परीक्षकको बुरे शब्द कहे।

(घ) उसने एक धर्मात्माकी बुराई की और एक गरीब आदमीके सिरमें लाठी मारी।

(ङ) रामने गोविंदकी आंख फोड़ दी और उसकी पुस्तक फाड़ दी।

(च) एक व्यभिचारीने मदिरा पीकर सब लोगोंको गालियां दीं।

८—बताओ निम्नलिखित वाक्योंमें क्या अशुद्धि है?

(क) मोहनने तमाम उमर विद्या प्राप्त करनेमें खर्च की, इसलिये मरते समय उसके ज्ञानावरणी कर्मका क्षय होगया।

(ख) सोहन सातावेदनीयके उदयसे नाच रंग तमाशेमें लगा हुआ है।

(ग) गोविन्दके अन्तराय कर्मका उदय है, इस कारण जन्मसे अन्धा है ।

(घ) बशीने एक कसाईको जीव वध करनेके लिये एक तलवार दी तो उसके ज्ञानावरणी कर्मका बंध हुआ ।

(ङ) रामभूतिका शरीर ऐसा सुन्दर और सुडौल उच्च गोत्र कर्मके उदयसे हुआ है ।

सातवाँ पाठ ।

सच्चे देव, शास्त्र, गुरु ।

सच्चा देव ।

सच्चा देव उसे कहते है, जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो ।

वीतरागी उसे कहते है, जो क्षुधा (भूख), तृषा, निद्रा, जन्म, मरण, बुढ़ापा, रोग, गर्व, भय, राग, द्वेष, मोह, चिन्ता, रति, अरति खेद, स्वेद (पसीना) और आश्चर्य इन अठारह दोषोसे रहित हो, अर्थात् जिसमें ये १८ दोष न हो. जो न किसीसे राग करता हो न किसीसे द्वेष रखता हो. सबको सम (बराबर) देखता हो ।

सर्वज्ञ उसे कहते हैं जो संसारके सब पदार्थोंको सब दशाओमें देखे और जाने । अर्थात् संसारमें ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जिसे सर्वज्ञ न जानता हो ।

जो कुछ पहले हो गया, जो अब हो रहा है और जो कुछ आगे होगा, वह सब सर्वज्ञको मालूम होता है।

हितोपदेशी उसे कहते हैं, जो सब जीवोंके कल्याण करनेवाला उपदेश दे।

जिस देवमें ये तीन गुण पाए जायँ, जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो—वही सच्चा देव है। उसको अरहंत, जिनेन्द्र, तीर्थंकर परमेष्ठी आदि अनेक नामोंसे पुकारते हैं।

सच्चा शास्त्र।

सच्चा शास्त्र उसे कहते हैं, जो सच्चे देवका कहा हुआ हो, कोई भी जिसका खंडन न कर सके, जिसमें किसी तरहका विरोध न हो, जिसमें सच्ची बातोंका उपदेश भरा हो, जिसके पढने, पढ़ाने, सुनने, सुनानेसे जीवोंका कल्याण हो, और जो खोटे मार्गका नाश करनेवाला हो, इसको आगम, सरस्वती, जिनवाणी भी कहते हैं।

सच्चा गुरु।

सच्चा गुरु उसे कहते हैं, जो पांचों इन्द्रियोंके विषयोंमेंसे किसी भी विषयकी लालसा न रखता हो, जो त्रस जीवों तथा स्थावर जीवोंकी हिंसासे दूर रहता हो, जिसके पास किसी प्रकारका भी आरम्भ व परिग्रह न हो और जो सदा पढने, पढ़ाने, अपनी आत्माका चिंतवन करने तथा ध्यानमें लीन रहता हो। ऐसे गुरुको ही साधु, मुनि, यति, तपस्वी आदि कहते हैं।

प्रश्नावली ।

१—एक देवके पास एक शास्त्र और एक स्त्री है, एक शास्त्रमें जीवहिंसाका उपदेश है और उसमे एक स्थानपर एक बातको अच्छा कहा है और दूसरे स्थानपर उसी बातको बुरा कहा है। एक गुरुके पास सवारीके लिये घोडा है और वह जहां जाता है लोगोंसे पैर पुजवाता है, और भेंट लेकर भोजन करता है। बताओ ये तीनों सच्चे देव, शास्त्र, गुरु हैं या नहीं? यदि नहीं तो क्यों?

२—सच्चे देवके लिये किन किन बातोंकी जरूरत है? जिस देवमें सत्रह दोष तो हैं नहीं, परन्तु एक दोष है, तो बताओ वह सच्चा है या नहीं?

सर्वज्ञ किसे कहते हैं? सर्वज्ञका कहा हुआ शास्त्र ही क्यों सच्चा शास्त्र है? यह पुस्तक शास्त्र है या नहीं?

३—वीतरागी और हितोपदेशीमे क्या भेद है?

वीतरागी हितोपदेशी कैसे हो सकता है?

४—सच्चे गुरुका स्वरूप कहो। पाठशालाओमे नीति, शास्त्र, गणित, व्याकरण पढानेवाले अध्यापक सच्चे गुरु है या नहीं?

आठवाँ पाठ।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र।

सम्यग्दर्शन।

सच्चे देव, सच्चे गुरु, सच्चे शास्त्र तथा दयामयी धर्मका सच्चे दिलसे श्रद्धान (यकीन) करना, इसका नाम सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्दर्शन धर्मरूपी पेड़की जड़ है अथवा धर्मरूपी घरकी नींव है। सबसे पहले इसे धारण करना चाहिये। इसके बिना सब धर्म कर्म निष्फल हैं। उनसे कुछ अधिक लाभ नहीं होता है।

सम्यग्दर्शनकी बड़ी महिमा है। जिस जीवको सम्यग्दर्शन होगया है वह मरकर उत्तम देव या मनुष्य ही होता है, स्त्रियोंमें पैदा नहीं होता, नरक भी जाय तो पहले नरकसे नीचे नहीं जाता।

सम्यग्ज्ञान।

पदार्थके स्वरूपको ठीक जैसाका तैसा जानना और उसमें किसी प्रकारका सन्देह या संशय नहीं करना, इसका नाम सम्यग्ज्ञान है।

सम्यग्दर्शनके होनेसे पहले जो ज्ञान होता है उसे कुज्ञान कहते हैं। वही ज्ञान सम्यग्दर्शन होनेपर सम्यग्ज्ञान कहलाता है। सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानका कारण है। विना सच्ची श्रद्धाके सम्यग्ज्ञान नहीं हो सकता।

सम्यग्ज्ञानसे ही आत्मज्ञान और केवलज्ञान होता है। इसलिये सम्यग्ज्ञानको शास्त्र स्वाध्याय, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने, तथा बारबार विचारनेसे प्राप्त करना चाहिये।

ज्ञानकी बड़ी महिमा है। ज्ञान होनेसे थोड़ीसी जिंदगीमें भव भवके पाप कटते हैं जो अज्ञानी जीव है उनके करोड़ों जन्मकी मेहनतसे भी नहीं कटते।

विद्यार्थियोंके लिये अत्यंत उपयोगी पुस्तकें।

बालबोध जैन धर्म पहला भाग	-)।
,, ,, दूसरा भाग	=)
,, ,, तीसरा भाग	≡)॥
,, ,, चौथा भाग	।≡)
श्री जिनवाणी गुटिका (जिनेन्द्र गुण गायन)	।)
रत्नकरंड श्रावकाचार सान्वयार्थ	॥।)
मोक्षशास्त्र सचित्र ,,	२)
द्रव्य-संग्रह ,,	।=)
छहढाला ,,	।≡)
छहढाला—दौलतराम कृत	-)
मोक्षशास्त्र अर्थात् तत्वार्थसूत्र	=)॥
जिनेन्द्र पञ्चकल्याणक—पांचो कल्याणक हैं	-)
दर्शन पाठ =)	अहिंसा धर्म प्रकाश ॥)
जैन सिद्धान्त प्रवेशिका ।≡)	दर्शन कथा ।-)
शीलकथा ॥=)	दान कथा ≡)

पता—बाबू रूपचन्द्र गोयलीय,
श्री दयासुधाकर कार्यालय,
गढ़ी अब्दुल्लाखाँ (सहारनपुर)

सब प्रकारके दिगम्बर जैन ग्रन्थ मिलनेका सुप्रसिद्ध पता—

दिगम्बर जैन पुस्तकालय—सूरत।

ॐ

श्रीपरमात्मने नमः ।

बालबोध-जैनधर्म

चौथा भाग ।

लेखक

स्व० बाबू दयाचन्द्र जैन बी० ए०

और

धर्मरत्न पं० लालाराम शास्त्री ।

* श्रीवीतरागाय नमः । *

बालबोध-जैनधर्म

चौथा भाग ।

प्रकाशक—

मदनलाल मोहनलाल बाकलीवाल,
मालिक, जैन-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग बम्बई नं० ४.

जुलाई, सन् १९४५

तेरहवीं आवृत्ति] * [मूल्य सात आने

मुद्रक—रघुनाथ दिपाजी देसाई, न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
६ केलेवाडी, गिरगाँव, बम्बई ४.

निवेदन

(दूसरी आवृत्तिका)

बालबोध जैनधर्म नामक पुस्तकमालाका चौथा भाग पहले एक बार प्रकाशित हो चुका है। अब पुनः यह भाग संशोधित करके प्रकाशित किया जाता है। इस भागमें 'देवशास्त्रगुरुपूजा'.'पंचपरमेष्ठीके मूलगुण' आदि ११ पाठ हैं, जिनको प्रथम तीन भागोंके अनुसार पढना योग्य है।

हमने इस पुस्तकमालाके चारों भागोंमे अत्यन्त सरलताके साथ थोड़े शब्दोंमें जैनधर्मकी कुछ मुख्य मुख्य वातोंका वर्णन किया है। जिनको पढकर जैनधर्मका साधारण ज्ञान हो सकता है और रत्नकरण्डश्रावकाचार, द्रव्यसंग्रह, तत्त्वार्थसूत्र आदि आचार्यों द्वारा प्रणीत शास्त्रोंमें बालक तथा बालिकाओंका अति सुगमतासे प्रवेश हो सकता है और उनके विषयको वे अच्छी तरह समझ सकते हैं।

हमने यथासम्भव इसके सम्पादन तथा संशोधनमें सावधानी रक्खी है, पहली आवृत्तिमें भाषा कुछ कठिन हो गई थी, उसे भी अबकी बार जहाँतक हो सका सरल करदी है और भी उचित परिवर्तन कर दिये हैं। यदि कहींपर कोई अशुद्धी रह गई हो, तो उसे अध्यापकगण कृपा करके विद्यार्थियोंकी पुस्तकोंमें ठीक करा देवे और हमें भी सूचना देवें कि जिससे अगली आवृत्तिमें अशुद्धियाँ ठीक हो जायें।

लखनऊ
ता० ५-३-१५

आपका सेवक
दयाचन्द्र गोयलीय बी० ए०

नमः सिद्धेभ्यः ।

बालबोध-जैनधर्म ।

चौथा भाग ।

पहला पाठ ।

देवशास्त्रगुरुपूजा ।

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।

गाथा ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

ॐ अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः ।

(यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए)

चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा–अरहंत–लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॥

नोट—पूजन करनेसे पहले स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहिनकर तीसरे भाग-मेंसे एक अथवा दोनों मंगल पढते हुए भगवानका न्हवन (अभिषेक) करना चाहिए । पूजाके लिए सामग्री शुद्ध होनी चाहिए ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा ।

(यहाँ पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए)

अडिल्ल छन्द ।

प्रथमदेव अरहंत, सुश्रुतसिद्धांत जू ।
गुरुनिरग्रन्थ[1]महंत मुकतिपुरपंथ[2] जू ॥
तीन रतन जगमांहि, सु ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद, परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा ।

पूजों पद अरहंतके, पूजों गुरुपद सार ।
पूजो देवी सरस्वती, नित[3]प्रति अष्टप्रकार[4] ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

गीताछन्द ।

सुर[5]पति उरग[6]नरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवरण उज्जल, देख छवि मोहत सभा ॥
वर[7] नीर छीर[8]समुद्र घट[9] भरि, अग्र[10] तसु बहुविधि नचूं ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा ।

मलिनवस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव-मल-छीन ।
जासों पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वा० ।

---

१ परिग्रह रहित । २ मोक्षनगरीका रास्ता । ३ सदा—हररोज । ४ आठ तरह ५ इन्द्र । ६ धरणेन्द्र । ७ उत्तम । ८ क्षीरसागरका । ९ घड़ा । १० आगे ।

जे त्रिजगउदर[1]मझार प्रानी, तपत अति दुद्धर[2] खरे ।
तिन अहितहरन[3] सुवचन जिनके, परमशीतलता भरे ॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण[4] पावन[5], सरस चन्दन घसि सचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥ २ ॥

दोहा ।

चन्दन शीतलता करै, तपत वस्तु परवीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः ससारतापविनाशनाय चदन नि० स्वा० ।

यह भवसमुद्र अपार तारण-, के निमित्त सुविधि ठही ।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर[6] नौका सही ॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल[7]-पुंज धरि त्रयगुण जचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥ ३ ॥

दोहा ।

तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन ।
जासों पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वाहा ।

जे विनयवंत सुभव्य-उर[8]-अंबुज-प्रकाशन भान[9] हैं ।
जे एक मुखचारित्र भाषत, त्रिजगमांहि प्रधान हैं ॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप[10], भव भव कुवेदन[11]सों बचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥ ४ ॥

---

१ तीनों लोकमें । २ कठिन । ३ दुःखको हरनेवाले, हित करनेवाले ४ सुगन्ध । ५ प्रासुक । ६ श्रेष्ठ । ७ चावल । ८ हृदयकमल । ९ सूर्य १० पुष्प । ११ बुरे दुःख ।

दोहा ।

विविध भांति परिमल[1] सुमन[2], भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्प नि० स्वाहा ।

अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुधा[3]-उरग[4] अमान[5] है ।
दुस्सह भयानक तास नाशन,-को सुगरुड़ समान है ॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य[6] वर घृतमें पचूँ[7] ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥ ५ ॥

दोहा ।

नानाविध संयुक्तरस, व्यंजन सरस[8] नवीन ।
जासो पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि० स्वाहा ।

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने, मोहतिमिर[9] महाबली ।
तिहिं कर्मघातक ज्ञानदीप, प्रकाश जोतिप्रभावली ॥
इह भांति दीप प्रजाल कंचन,-के सुभाजनमें खंचूँ[10] ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥ ६ ॥

दोहा ।

स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि[11] हीन ।
जासो पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप नि० स्वाहा ।

जो कर्म-ईंधन दहन, अग्निसमूहसम उद्धत लसै ।
वर धूप तास सुगंधि ताकरि, सकल परिमलता हँसै ।

---

१ सुगन्ध । २ पुष्प । ३ क्षुधारूपी । ४ सर्प । ५ प्रमाण रहित । ६ पकवान बनाकर । ७ घीमें पकाऊँ । ८ स्वादिष्ट । ९ मोहरूपी अन्धरा । १० सजाकर । ११ अन्धरा ।

इह भाँति धूप चढ़ायनित, भव-ज्वलनमांहि नहीं पचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥७॥

दोहा।

अग्निमाहिं परिमल दहन, चन्दनादि गुणलीन।
जासो पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वसनाय धूप नि० स्वाहा।

लोचन[१] सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरनी, सकल फल गुणसार हैं।
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, सकल अमृतरस सचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥८॥

दोहा।

जे प्रधान फल फलविषैं, पंचे[२]करणरसलीन।
जासो पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल नि० स्वाहा।

जल परम उज्जल गंध अ[३]क्षत पुष्प च[४]रु दीपक धरूँ।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहु जनमके पा[५]तक हरूँ।
इह भाँति अर्घ चढ़ाय नित, भव करत शिवपंकति म[६]चूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु, निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ॥१७॥

दोहा।

वसुविधि अर्घ संजोयकै, अति उछा[७]ह मन कीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य नि० स्वाहा।

---

१ नेत्र। २ पाँचों इन्द्रियाँ। ३ चावल। ४ नैवेद्य। ५ पाप। ६ रचूँ। ७ उत्साह।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।
भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥ १ ॥

पद्धड़ि छन्द ।

चउकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश[1]-दोषराशि[2] ।
परम सुगुण हैं अनंत धीर, कहवतके छयालिस गुण गँभीर
२ ॥ शुभ समवशरण शोभा अपार, शतइन्द्र[3] नमत कर[4]
ोश धार । देवाधिदेव अरहंत देव, वन्दों मनवचतनकरि
सेव ॥३॥ जिनकी धुनि ह्वै ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा
नूप । दशअष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सातशतक सुचेत
४ ॥ सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूँथे बारह सुअङ्ग ।
वि शँशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति
याय ॥ ५ ॥ गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन
तनत्रय निधि अगाध । संसार देह वैराग्यधार, निरवांछि
पै शिवपदनिहार ॥ ६ ॥ गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस,
नवतारनतरन जिहाज ईस । गुरुकी महिमा वरनी न जाय,
गुरुनाम जपों मन वचन काय ॥ ७ ॥

सोरठा ।

कीजे शक्तिप्रमान, शक्तिबिना सरधा धरै ।
'द्यानत' श्रद्धावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

---

१ अठारह । २ समूह । ३ एक सौ । ४ हाथ । ५ सात सौ । ६ सूर्य । ७ चन्द्र ।
८ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र । ९ संसारसे तरने और तारनेवाला ।

शान्तिपाठ । *

रूप चौपाई (१६ मात्रा)

शांतिनाथमुख शशिउनहारि[1], सीलगुणव्रतसंजमधारी ।
लखन[2] एकसौआठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल[3] लाजैं ॥१॥
पंचमचक्रवर्तिपदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी । इन्द्रनरे-
न्द्रपूज्य जिननायक, नमो शांतिहित शांतिविधायक ॥ २ ॥
दिव्यविटप[4]पहुपनकी[5] वरसा, दुंदुभि आसन वाणी[6] सरसा ।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुझ[7] प्रातिहार्य मनहारी ॥ ३ ॥
शांति जिनेस शांतिसुखदाई, जगतपूज्य पूजो सिर नाई ।
परमशांति दीजै हम सबको, पढ़ें जिन्हे पुनि चार संघको ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका ।

पूजैं जिन्हे मुकुट हार किरीट[8] लाके,
इन्द्रादिदेव, अरु पूज्य पदाब्जे[9] जाके ।
सो शांतिनाथ वरवंशजगत्प्रदीप[10],
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको, यतीनको औ यतिनायकोंको[11] ।
राजा प्रजा राष्ट्र[12] सुदेशको ले, कीजे सुखीहे जिन शांतिको
दे ॥ ६ ॥

---

* शातिपाठ वोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते जाना चाहिये ।

१ चन्द्रमाके समान । २ लक्षण । ३ कमलके पत्ते । ४ अशोकादि कल्पवृक्षके । ५ पुष्पोंकी । ६ दिव्यध्वनि । ७ तुम्हारे । ८ मृकुट । ९ चरणारविंद । १० जगतको प्रकाशित करनेवाले । ११ साधुओंको । १२ देश ।

मन्दाक्रान्ता ।

होवै सारी प्रजाको, सुख बलयुत हो, धर्मधारी नरेशो ।
होवै वर्षा समैपै, तिलभर न रहै, व्याधियोंका अँदेशा ॥
होवै चोरी न जारी, सुसमय वरतै, हो न दुष्काल भारी ॥
सारे ही देश धारैं, जिनवरवृषको, जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दोहा ।

घातिकर्म जिन नाशकर, पायो केवलराज ।
शांति करैं ते जगतमें, वृषभादिक जिनराज ॥ ८ ॥

मन्दाक्रान्ता ।

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगतीका ।
सद्वृत्तोंका सुजस कहके दोष ढाँकूं सभीका ॥
बोलूं प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊं ।
तौलो सेऊं चरन जिनके, मोक्ष जौलौं न पाऊं ॥ ९ ॥

आर्या ।

तवँपद मेरे हियमें, मँम हिय तेरे पुनीत चरणोंमे ।
तबलौं लीन रहे प्रभु, जबलौं प्राप्ती न मुक्तिपदकी हो ॥१०॥
अक्षर पद मात्रासे, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे ।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणाकरि पुनि छुड़ाहु भवदुखसे ११
जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊं तव चरणशरण बलिहारी ।
मरणसमाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी ॥१२॥
(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

---

१ राजा । २ धर्मका । ३ ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय अन्तराय । ४ केवलज्ञान । ५ समीचीन मतधारियोंके । ६ गुण । ७ तेरे चरण । ८ मेरा । ९ फिर ।

विसर्जनपाठ ।

दोहा ।

विन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय ।
तुम प्रसादतें परमगुरू, सो सब पूरन होय ॥ १ ॥
पूजनविधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आव्हान ।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ॥ २ ॥
मंत्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देव चरणका सेव ॥ ३ ॥
आये जो जो देवगण, पूजे भक्तिप्रमान ।
ते अब जावहु कृपाकर, अपने अपने थान ॥ ४ ॥

प्रश्नावली ।

१—पूजनसे क्या समझते हो—और पूजनके लिए किन किन चीजोंकी जरूरत है । पूजनके अष्टद्रव्योंके नाम बताओ ?

२—पूजनके पीछे शातिपाठ क्यों पढा जाता है और पूजनके पहले आव्हान क्यों किया जाता है ?

३—अर्घ किसे कहते हैं और अर्घ कब चढाया जाता है ?

४—अष्टद्रव्य जो चढाये जाते हैं, वे किसी क्रमसे चढाये जाते हैं या जिसे चाहें उसे पहले चढा देते हैं ?

५—पूजा खड़े होकर करना चाहिये या बैठकर ? पूजा करने वालोंको सबसे पहले और सबसे अन्तमें क्या करना चाहिए ?

६—अष्टद्रव्योंके चढानेके पश्चात् जो जयमाला पढी जाती है उसमें किस बातका वर्णन होता है ?

७—अक्षत और फल चढानेके छद पढो और यह बताओ कि छद पढनेके पश्चात् क्या कहकर द्रव्य चढाना चाहिए ?

दूसरा पाठ ।

पंचपरमेष्ठीके मूलगुण ।

परमेष्ठी उसे कहते हैं, जो परमपदमें स्थित हो। ये पॉच होते हैं:—१ अरहंत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय और ५ सर्वसाधु ।

अरहंत उन्हे कहते हैं, जिनके ज्ञानवरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय ये चार घातियाकर्म नाश हो गए हो। और जिनमें निम्ननिखित ४६ गुण हो और १८ दोष न हो।

दोहा ।

चवतीसो अतिशय[1] सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ ।
अनॅत[2] चतुष्टय गुण सहित, छीयालीसो पाठ ॥

अर्थात् ३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, और ४ अनंतचतुष्टय ये ४६ गुण हैं। ३४ अतिशयोमेसे १० अतिशय जन्मके होते हैं, १९ केवलज्ञानके हैं और १४ देवकृत होते हैं।

जन्मके दश अतिशय ।

अतिशय रूप सुगंध तन, नाहिं पॅसेव[3] निहार ।
प्रियहितवचन अतुल्यवल[4], रुधिर श्वेत आकार ॥
लच्छन सहसरु आठ तन, समचतुष्क संठान[5] ।
वज्रवृषभनाराचजुत, ये जनमत दश जान ॥

१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, ३

---

१ अद्भुत बात, ऐसी अनोखी बात जो साधारण मनुष्योंमें न पाई जावे। २ अनत। ३ पसीना। ४ जिसकी कोई तुलना न हो। ५ सुडौल सुन्दर आकार।

पसेव रहित शरीर, अर्थात् ऐसा शरीर जिसमे प्रसीना न आवे, ४ मल मूत्र रहित शरीर, ५ हितमितप्रियवचन बोलना, ६ अतुल्यबल, ७ दूधके समान सफेद खून, ८ शरीरमें एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्र संस्थान और १० वज्रवृषभ नाराच संहनन, ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही होते हैं। अर्थात् अरहंत भगवानका शरीर जन्मसे ही बड़ा सुन्दर सुडौल होता है। उसमेंसे बड़ी अच्छी सुगंध आती है और उसमे न पसीना आता है, न मल मूत्र होता है। उनके शरीरमें अतुल्य बल होता है और उनका रक्त सफेद दूधके समान होता है। वे सबसे मीठे वचन बोलते हैं। उनके शरीरके हाड़ वगैरह वज्रके होते हैं और उनके शरीरमें १००८ लक्षण होते हैं।

केवलज्ञानके दश अतिशय।

योजन शत इकमे सुभिख, गगन[२]-गमन मुख चार।
नहिं अदया उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार[३]॥
सबविद्या-ईश्वरपनो, नाहिं बढ़ैं नख केश[४]।
अनिमिष दृग छायारहित, दशकेवलके वेश॥

१ एकसौ योजनमें सुभिक्षता, अर्थात् जिस स्थानमे भगवान हों उससे चारो तरफ सौ सौ योजनमे सुकाल होना, २ आकाशमे गमन, ३ चारों ओर मुखोका दीखना, ४ अदयाका अभाव, ५ उपसर्गका न होना, ६ कवलाहार (ग्रासवाला) आहार न लेना, ७ समस्त विद्याओका स्वामीपना, ८ नख के-

---

१ हाड वेष्टन और कीलोंका वज्रमय होना। २ आकाश। ३ ग्रासाहार। ४ बाल।

शोंका न वढ़ना, ९ नेत्रोंकी पलकें न झपकना, १० और शरीरकी छाया न पड़ना। जब अरहंतभगवानको केवलज्ञान हो जाता है, तो उस समयसे जहाँ भगवान होते हैं, उस स्थानसे चारो तरफ सौ सौ योजन तक सुकाल रहता है। पृथिवीसे ऊपर उनका गमन होता है, देखनेवालोंको चारो तरफ उनका मुँह दिखलाई देता है। उनपर कोई उपसर्ग नहीं कर सकता और उनके शरीरसे किसी भी जीवकी हिंसा नहीं होती। न आहार लेते हैं, न उनकी पलकें झपकती हैं, न उनके वाल और नाखून वढ़ते हैं, और न शरीरकी परछाँई पड़ती है, वे समस्त विद्या और शास्त्रोंके ज्ञाता हो जाते हैं। ये दश अतिशय केवलज्ञान होनेके समय प्रकट होते हैं।

देवकृत चौदह अतिशय।

देवरचित हैं चारदश, अर्द्धमागधी भाष[1]।
आपसमाहीं मित्रता, निर्मलदिश[2] आकाश॥
होत फूल फल ऋतु सबै, पृथिवी काचसमान[3]।
चरण कमल तल कमल है, नभतैं[4] जय जय वान[5]॥
मन्द सुगंध बयारि[6] पुनि, गंधोदककी वृष्टि।
भूमिविषै कण्टक[7] नहीं, हर्षमयी सव सृष्टि॥
धर्मचक्र आगे रहै, पुनि वसु[8] मंगल सार।
अतिशय श्रीअरहंतके, ये चौंतीस प्रकार॥

१ भगवानकी अर्द्धमागधी भाषाका होना, २ समस्त

---

१ भाषा। २ दिशा। ३ काच, दर्पण। ४ आकाशसे। ५ वाणी। ६ हवा। ७ काँटे, कङ्कर। ८ आठ मंगलद्रव्य।

जीवोंमे परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना, ५ सब ऋतुके फल फूल धान्यादिकका एक ही समय फलना, ६ एक योजन तककी पृथिवीका दर्पणकी तरह निर्मल होना, ८ चलते समय भगवानके चरणकमलोंके तले सुवर्ण–कमलोंका होना, ८ आकाशमे जय जय ध्वनिका होना, ९ मन्द सुगंधित पवनका चलना, १० सुगंधमय जलकी वृष्टि होना, ११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ समस्त जीवोका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका चलना, १४ छत्र चमर ध्वजा घंटा आदि आठ मंगल द्रव्योंका साथ रहना। इस प्रकार सब मिलकर ३४ अतिशय अरहंत भगवानके होते हैं।

आठ प्रातिहार्य।

तरु अशोकके निकटमें सिंहासन छबिदार।
तीन छत्र सिरपर लसैं, भामण्डल पिछवार[१]॥
दिव्यध्वनि[२] मुखतैं, खिरै, पुष्पवृष्टि सुर[३] होय॥
ढोरें चौसठि चमर जखं[४], बाजैं दुन्दुभि जोय॥

अर्थात—१ अशोक वृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भगवानके सिरपर तीन छत्रका होना, ४ भगवानके पीठके पीछे भामण्डलका होना, ५ भगवानके मुखसे निरक्षरी (विना-अक्षरकी) दिव्यध्वनिका होना, ६ देवोंके द्वारा फूलोकी

१ पीछे। २ भगवानकी अक्षर रहित सबके समझमें आनेवाली सुन्दर अनुपम वाणी। ३ देवकृत। ४ यक्ष जातिके व्यंतर देव।

वर्षा होना, ७ यक्ष देवोंद्वारा चौंसठ चमरोंका ढुरना और ८ दुन्दुभि बाजोंका बजना, ये आठ प्रतिहार्य हैं।

अनन्त चतुष्टय।

ज्ञान अनंत अनंत सुख, दरस अनंत प्रमान।
बल अनंत अरहंत सो, इष्टदेव पहिचान॥

१ अनंतदर्शन, २ अनंतज्ञान, ३ अनंतसुख, ४ अनंतवीर्य, ये चार अनंत चतुष्टय कहे जाते हैं। इनसे भगवानका ज्ञान, दर्शन, सुख तथा बल अनंत होता है, अर्थात् इतना होता है कि जिसकी कोई सीमा या हद नहीं होती है। इस प्रकार ३४ अतिशय, ८ प्रतिहार्य, ४ अनंत चतुष्टय सब मिलाकर ४६ गुण अरंहत भगवानके होते हैं।

अठारह दोष।

जन्म जरा[2] तिरखा छुधा, विस्मय[3] आरत खेद[4]।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद[5]॥
राग द्वेष अरु मरणजुत, ये अष्टादश[6] दोष।
नहिं होते अरहन्तके, सो छवि[7] लायक मोष॥

१ जन्म, २ जरा (बुढ़ापा), ३ तृषा (प्यास), ४ क्षुधा (भूख), ५ विस्मय (आश्चर्य), ६ अरति (पीड़ा), ७ खेद (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद, ११ मोह (अज्ञान), १२ भय (डर), १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ स्वेद (पसीना), १६ राग, १७ द्वेष और १८ मरण। ये अठारह दोष अरंहत भगवानमें नहीं होते हैं।

---

१ जिनका अन्त न हो। २ बुढापा। ३ आश्चर्य। ४ क्लेश। ५ पसीना। ६ अठारह। ७ मूर्ति।

सिद्ध परमेष्ठीके मूलगुण ।

सिद्ध उन्हे कहते हैं, जो आठो कर्मोंका नाश करके संसारके बन्धनसे सदैवके लिए मुक्त हो गये हैं, अर्थात् जो फिर कभी संसारमें न आयेंगे। इनमे नीचे लिखे हुए ८ मूलगुण होते हैं।

सोरठा।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरुलघू[१] अवगाहना[२]।
सूच्छम[३] वीरजवान, निराबाध[४] गुण सिद्धके ॥

इन गुणोंकी परिभाषा (स्वरूप) समझना इस पुस्तकके पढ़नेवाले विद्यार्थियोंकी शक्तिसे बाहर है, इसलिये केवल नाम मात्र दे दिये गए हैं।

१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघु, ५ अवगाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य, ८ अव्याबाधत्व ।

आचार्य परमेष्ठीके मूलगुण ।

आचार्य उन्हें कहते हैं, जिनमें नीचे लिखे हुए ३६ मूलगुण हों। ये मुनियोंके संघके अधिपति होते हैं, और उनको दीक्षा तथा प्रायश्चित्त वगैरह दंड देते हैं।

द्वादश[५] तप दश धर्मजुत, पालैं पंचाचार।
षट्[६] आवशि त्रयगुप्ति[७] गुन, आचारज[८] पद सार ॥

अर्थात्–तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३।

---

१ न हलका न भारी। २ एक एक आत्माके आकारमें अनेक आत्माओंके आकारोंका रहना। ३ अतीन्द्रियगोचर। ४ बाधा रहित। ५ बारह। ६ छह। ७ तीन गुप्ति। ८ आचार्य।

बारह तप।

अनशन ऊनोदर करै, व्रतसंख्या रस छोर।
विविक्तशयनासन धरै, काय कलेश सुठोर॥
प्रायश्चित्त धर विनयजुत, वैयाव्रत स्वाध्याय।
पुनि उत्सर्ग विचारकै, धरै ध्यान मन लाय॥

अर्थात्—१ अनशन (भोजनका त्याग करना), २ ऊनोदर (भूखसे कम खाना), ३ व्रतपरिसंख्यान (भोजनके लिये जाते हुए घर वगैरहका नियम करना), ४ रसपरित्याग (छहों रस या एक दो रसका छोड़ना), ५ विविक्तशय्यासन (एकांत स्थानमे सोना वैठना), ६ कायक्लेश (शरीरको कष्ट देना), ७ प्रायश्चित्त (दोषोका दंड लेना), ८ रत्नत्रय व उसके धारकोंका विनय करना, ९ वैयाव्रत अर्थात् रोगी वृद्ध मुनिकी सेवा करना, १० स्वाध्याय करना (शास्त्र पढ़ना) ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना) और ध्यान करना।

दश धर्म।

छिमा[1] मारदव, आरजव सत्यवचन चितपाग[2]।
संजम तप त्यागी सरव, आकिञ्चन तियत्याग[3]॥

१ उत्तम क्षमा (क्रोध न करना), उत्तम मार्दव (मान न करना), ३ उत्तम आर्जव (कपट न करना), ४ उत्तम सत्य (सच वोलना), ५ उत्तम शौच (लोभ न करना, अन्तःकरणको शुद्ध रखना), ६ उत्तम संयम (छह कायके जीवोकी दया पालना और पॉचो इंद्रियोको व मनको वशमे रखना),

---

१ क्षमा। २ चित्तको पाक वा शुद्ध रखना शौच है। ३ स्त्रीत्याग।

७ उत्तम तप, ८ उत्तम त्याग (दान करना), ९ उत्तम आकिञ्चन (परिग्रहका त्याग करना), १० उत्तम ब्रह्मचर्य (स्त्री मात्रका त्याग करना)।

छह आवश्यक।

समता धर वंदन करै, नाना थुती[1] बनाय।
प्रतिक्रमण स्वाध्याय जुत, कायोत्सर्ग लगाय॥

१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना), २ वंदना (हाथ जोड़ मस्तकसे लगाकर नमस्कार करना), ३ पंचपरमेष्ठीकी स्तुति करना, ४ प्रतिक्रमण (लगे हुए दोषोपर पश्चात्ताप करना), ५ स्वाध्याय (शास्त्रोंको पढ़ना), ६ कायोत्सर्ग लगाकर अर्थात् खड़े होकर ध्यान करना।

पञ्च आचार और तीन गुप्ति।

दर्शन ज्ञान चरित्र तप, वीरज पंचाचार।
गोपै[2] मन वच कायको, गिन छतीस गुन सार॥

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार ये पाँच आचार हैं।

१ मनोगुप्ति (मनको वशमे करना), २ वचनगुप्ति (वचनको वशमें करना), ३ कायगुप्ति (शरीरको वशमें करना), ये तीन गुप्ति हैं।

इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं।

उपाध्याय परमेष्ठीके २५ मूलगुण।

उपाध्याय उन्हें कहते हैं, जो ११ अंग और १४ पूर्वके पाठी हों। ये स्वयं पढ़ते और अन्य पासमे रहनेवाले भव्य-

१ स्तुति। २ वशमें करे।

जीवोंको पढ़ाते हैं। ११ अङ्ग और १४ पूर्वको पढ़ना पढ़ाना ही उपाध्यायके २५ मूलगुण होते हैं।

ग्यारह अङ्ग।

प्रथमहिं आचारांग गनि, दुजौ सूत्रकृतांग।
ठाणअंग तीजौ सुभग, चौथौ समवायांग॥
व्याख्यापण्णति पाँचमौं, ज्ञातृकथा षट् जान।
पुनि उपासकाध्ययन है, अंतःकृतदश ठान॥
अनुत्तरण उत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान।
बहुरि प्रश्नव्याकरण जुत, ग्यारह अंग प्रमान॥

१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अंतःकृतदशांग, ९ अनुत्तरोत्पादकदशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, और विपाकसूत्रांग ये ग्यारह अंग हैं।

चौदह पूर्व।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तीजो वीरजवाद।
अस्तिनास्तिपरवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद॥
छट्ठो कर्मप्रवाद है, सतप्रवाद पहिचान।
अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमौं प्रत्याख्यान॥
विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महन्त।
प्राणवादकिरिया बहुल, लोकबिन्दु है अन्त॥

१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणीपूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ५ ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्यप्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व,

१० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये चौदह पूर्व हैं।

सर्वसाधुके २८ मूलगुण।

साधु उन्हें कहते हैं जिसमे नीचे लिखे हुए २८ मूलगुण हों, वे मुनि तपस्वी कहलाते हैं। उनके पास कुछ भी परिग्रह नहीं होता और न वे कोई आरम्भ करते हैं। वे सदा ज्ञान ध्यानमें लवलीन रहते हैं।

पञ्च महाव्रत[1]।

हिंसा अनृत[2] तसकरी[3], अब्रह्म[4] परिगह पाय।
मन वच तनतैं त्यागवो, पंच महाव्रत थाय॥

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत।

पञ्च समिति।

ईर्या भाषा एषणा, पुनि क्षेपण आदान।
प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पाँचौं समिति विधान॥

१ ईर्य्यासमिति (आलस्य रहित चार हाथ आगे जमीन देखकर चलना), २ भाषासमिति (हितकारी प्रामाणिक मीठे वचन बोलना), ३ एषणासमिति (दिनमें एक वार शुद्ध निर्दोष आहार लेना), ४ आदाननिक्षेपणसमिति (अपने पासके शास्त्र, पीछी, कमंडलु आदिको भूमि देखकर

१ हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन और परिग्रह इन पाँच पापोंके एक देश त्यागको अणुव्रत और सर्वदेश त्यागको महाव्रत कहते हैं। २ झूठ। ३ चोरी। ४ मैथुन, कुशील।

सावधानीसे धरना उठाना), ५ प्रतिष्ठापनसमिति (साफ भूमि देखकर जिसमे जीव जन्तु न हो मल मूत्र करना)।

शेष गुण ।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोध ॥
षटआवशि मंजन तजन, शयन भूमिका शोध ।
वस्त्रत्याग कचलुंच अरु, लघु भोजन इक वार ।
दाँतन मुखमे ना करे, ठाड़े लेहि अहार ॥

१ स्पर्श, २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, ५ श्रोत्र, इन पाँच इंन्द्रियोंको वशमे करना, ६ समता, ७ वन्दना, ८ स्तुति, ९ प्रतिक्रमण, १० स्वाध्याय, ११ कायोत्सर्ग, १२ स्नानका त्याग करना, १३ स्वच्छ भूमिपर सोना, १४ वस्त्र त्याग करना, १५ बालोका उखाड़ना, १६ एक बार थोड़ा भोजन करना, १७ दन्तधावन अर्थात् दाँतोन न करना, १८ खड़े खड़े आहार, लेना, इस प्रकार सब मिलकर २८ मूलगुण सर्वसामान्य मुनियोके होते हैं । मुनिजन इनका पालन करते हैं ।

प्रश्नावली ।

१ परमेष्ठी किसे कहते हैं? परमेष्ठी पाँच ही होते हैं या कुछ कमती बढती भी?

२ पच परमेष्ठीके कुल गुण कितने हैं? मुनिके मूलगुण कितने हैं?

३ जो जीव मोक्षमें हैं, उनके और कौन कौन गुण हैं?

---

१ स्पर्शन इंद्रिय । २ आँख । ३ कान । ४ छह आवश्यक । ५ शरीरको नहीं धोना । ६ और । ७ थोड़ा ।

४ महावीरस्वामी जब पैदा हुए थे, तब उनमें अन्य मनुष्योंसे कौन कौन असाधारण बातें थीं ?

५ अतिशय, प्रातिहार्य, आचार्य, गुप्ति, ऊनोदर, आकिंचन्य, प्रतिक्रमण, वज्रवृषभनाराच सहनन, समचतुरस्रसस्थान, व्युत्सर्ग, एषणासमिति, स्वाध्याय इससे क्या समझते हो ?

६ समिति, महाव्रत, अङ्ग, आवश्यक, और अनन्तचतुष्टयके कुछ भेद बताओ ?

७ शयन, स्नान, पान, सोने, खाने, पीने, नहाने, धोने और पहनने आदि नियमोंमे हममें और साधुओंमें क्या भेद है ?

८ आवश्यक, पचाचार, महाव्रत, समिति, प्रातिहार्य किनके होते हैं ?

९ पाठमें आए हुए १८ दोष किसमें नहीं होते ?

१० अरहतके देवकृत अतिशयोके नाम बतलाओ ? ये अतिशय कब प्रकट होते हैं ? केवलज्ञानके पहले या पीछे ?

११ एक लेख लिखो जिसमे यह दिखलाओ कि अरहत भगवानमें और साधारण मनुष्योंमें बाहरी बातोंमें क्या अन्तर है ?

१२ अरहत मुनि हैं या नहीं ? क्या तमाम मुनियोंमें केवलज्ञानके होनेपर केवलज्ञानके अतिशय प्रकट हो जाते हैं या केवल अरहंतोंके ?

१३ यदि किसी मुनिसे कोई अपराध हो जाता है, तो वे क्या करते हैं ?

१४ उपाध्याय किनको पढ़ाते हैं और क्या पढाते हैं ?

१५ भगवानकी जो वाणी खिरती है, वह किस भाषामें होती है ? उसको सब कोई समझ सकते हैं या नहीं ?

१६ पचपरमेष्ठीमें सबसे बड़ा पद किसका है और सबसे छोटा किसका ?

१७ आचार्य और साधु इनमें पहले कौनसे पदकी प्राप्ति होती है ?

१८ सिद्ध और अरहतमें क्या भेद है, और किसको पहले नमस्कार करना चाहिए ?

१९ एक परमेष्ठीके गुण दूसरे परमेष्ठीमें हो सकते है या नहीं और मोक्षमें रहनेवाले जीवोंको पचपरमेष्ठी कह सकते हैं या नहीं ?

तीसरा पाठ ।

चौबीस तीर्थंकरोंके नाम चिन्ह सहित

नाम तीर्थंकर	चिन्ह	नाम तीर्थंकर	चिन्ह
वृषभनाथ	वृषभ (बैल)	विमलनाथ	शूकर (सुअर)
अजितनाथ	हाथी	अनन्तनाथ	सेही
शंभवनाथ	घोड़ा	धर्मनाथ	वज्रदण्ड
अभिनन्दननाथ	बंदर	शांतिनाथ	हरिण
सुमतिनाथ	चकवा	कुन्थुनाथ	बकरा
पद्मप्रभ	कमल	अर.नाथ	मच्छ
सुपार्श्वनाथ	सॉथिया	मल्लिनाथ	कलश
चन्द्रप्रभ	चन्द्रमा	मुनिसुव्रतनाथ	कछुआ
पुष्पदन्त	मगर	नमिनाथ	लाल कमल
शीतलनाथ	कल्पवृक्ष	नेमिनाथ	शंख
श्रेयांशनाथ	गेंड़ा	पार्श्वनाथ	सर्प
वासुपूज्य	भैंसा	वर्द्धमान	सिंह

प्रश्नावली ।

१ दशवें, पंद्रहवें, बीसवे और चौबीसवे तीर्थंकरके नाम चिन्ह सहित बताओ !

२ घोड़ा, मगर, भैंसा, मच्छ और कछुआ ये चिन्ह किन किन और कौन कौनसे तीर्थंकरोंके हैं !

३ उन तीर्थंकरोंके नाम बताओ जिनके चिन्ह निर्जीव हैं !

४ ऐसे कौन कौन तीर्थंकर हैं, जिनके चिन्ह असैनी जीवोंके नाम हैं ?

५ हथियार, बाजे, बरतन और वृक्षके चिन्ह किन किन तीर्थंकरोंके हैं ! अलग अलग चिन्ह सहित बताओ ।

६ एक लड़केने चौबीसों तीर्थंकरोंके चिन्ह देखनेके पश्चात् कहा कि कैसी अनोखी बात है कि सबके चिन्ह जुदे जुदे हैं, किसीका भी चिन्ह किसीसे नहीं मिलता, बताओ कि उसका कहना सत्य है या नहीं !

७ क्या सब ही प्रतिमाओंपर चिन्ह होते हैं ! जिस प्रतिमापर चिन्ह न हो उसे तुम किसकी कहोगे ?

८ यदि प्रतिमाओंपर चिन्ह नहीं हों तो क्या कठिनाई होगी ?

९ यदि अजितनाथ भगवानकी प्रतिमापरसे हाथीका चिन्ह उठाकर गेंडेका चिन्ह बना दिया जावे, तो बनाओ उसे कौनसे भगवानकी प्रतिमा कहोंगे ?

१० साँथियाका आकार लिखकर बताओ ?

चौथा पाठ ।

सप्त व्यसन ।

व्यसन उन्हे कहते हैं जो आत्माके स्वरूपको भुला देवें, तथा आत्माका कल्याण न होने देवें। किसी भी विषयमें लवलीन होनेको व्यसन कहते हैं। यहाँ बुरे विषयमें लवलीन होना ही व्यसन है। व्यसन सेवन करनेवाले व्यसनी कहलाते हैं। और लोकमें बुरी दृष्टिसे देखे जाते हैं।

व्यसन सात हैं—१ जूआ खेलना, २ मांस खाना, ३ मदिरापान करना, ४ शिकार खेलना, ५ वेश्यागमन करना, ६ चोरी करना, और ७ परस्त्री सेवन करना।

१ रुपये पैसे और कोड़ियों वगैरहसे नक्की मूठ खेलना और हार जीतपर दृष्टि रखते हुए शर्त लगाकर कोई काम करना जूआ कहलाता है। जूआ खेलनेवाले जुआरी कहलाते हैं जैसे अफीम आदिके १-२-३ आदि अंकोपर सरत लगाना। जुआरी लोगोंका हर जगह अपमान होता है। जातिके लोग उनकी निंदा करते हैं और राजा उन्हें दण्ड देता है। जूआ खेलनेवालेको अन्य समस्त व्यसनोमे जबरन फँसना पड़ता है।

२ जीवोंको मारकर अथवा मरे हुए जीवोंका कलेवर खाना, मांस खाना कहलाता है। मांस खानेवाले हिंसक और निर्दयी कहलाते हैं।

३ शराब, भॉग, चरस, गॉजा वगैरह नशीली चीजोंका सेवन करना मदिरापान कहलाता है। इनके सेवन करनेवाले शराबी और नशेबाज कहलाते हैं। शराबियोंके धर्म कर्म और भले बुरेका कुछ भी विचार नहीं रहता। उनका ज्ञान विचार नष्ट हो जाता है। औरोंकी तो क्या घरके लोग भी उनपर विश्वास नहीं करते।

४ जंगलके रीछ, वाघ, सूअर हिरण वगैरह स्वच्छंद फिरने-वाले जानवरोंको तथा उड़ते हुए छोटे छोटे पक्षियोंको, अथवा और किसी जीवको बन्दूक वगैरह हथियारोंसे मारना शिकार खेलना कहलाता है। इस बुरे कामके करनेवालोंके महान् पापका बंध होता है। इन पापियोंके हाथमें बन्दूक वगैरह देखते ही जंगलके जानवर भयभीत हो जाते हैं।

५ वेश्या (बाजारकी औरत) से रमनेकी इच्छा करना, उसके घर आना जाना, उससे अतिशय प्रीति रखना, वेश्या-व्यसन कहलाता है। वेश्या व्यभिचारिनी स्त्री होती हैं। उससे सम्बन्ध रखनेसे ही मनुष्य व्यभिचारी हो जाता है। व्यभि-चारसे बुरे कर्मोंका बन्ध होता है, वेश्यागमनसे अनेक प्रकारके दुःसाध्य रोग भी हो जाते हैं, इसके सिवाय वेश्यासेवन कर-नेसे मा बहिन सेवन करनेका पाप भी लगता है, वसंततिलका

नामकी वेश्याके साथ विषय सेवन करनेसे एक ही भवमें १८ नातेकी कथा प्रसिद्ध है।

६ प्रमादसे बिना दी हुई, किसीकी गिरी हुई, या पड़ी हुई, या रक्खी हुई, या भूली हुई चीजको उठा लेना अथवा उठाकर किसीको दे देना चोरी है। जिसकी चीज चोरी चली जाती है, उसके मनमे बड़ा खेद होता है और इस खेदका कारण चोर होता है। इसके सिवाय चोरी करते समय चोरके परिणाम भी बड़े मलिन होते हैं। इस कारण चोरके महान् अशुभ कर्मोंका बन्ध होता है। लोकमें भी चोर दंड पाते हैं और सब कोई उन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं।

७ अपनी स्त्री अर्थात् जिसके साथ धर्मानुकूल विवाह किया है, उसको छोड़कर और सब स्त्रियाँ मां बहिनके समान हैं। अपनेसे बड़ी मां बराबर है और छोटी बहिन बेटीके बराबर है। उनके साथ विषय सेवन करना मानो अपनी मां बहिन और बेटीके साथ विषय सेवना है।

प्रश्नावली।

१ व्यसन किसे कहते हैं और ये व्यसन कितने होते हैं?

२ शतरज, ताश, गजफा खेलना, रुई, अफीम आदिके सौदे लगाना, लाटरी डालना, जिंदगीका बीमा करना, क्रिकेट, फुटबाल खेलना जूआ है या नहीं?

३ परस्त्री और वेश्यामें क्या भेद? या नहीं?

४ मदिरापानसे क्या समझते हो? है या नहीं?

५ एक अगरेजने जूनागढके जगलमें एक बड़ा शेर मारा, बताओ उसको पुण्य हुआ या पाप ? यदि पाप हुआ तो कौनसा ?

६ वसततिलका वेश्याकी कथा सुनी हो तो एक ही भवमें १८ नाते कैसे हुए ?

७ सबसे बुरा व्यसन कौनसा है और ऐसे ऐसे कौन कौन व्यसन है जिनमें हिंसाका पाप लगता है ?

८ परस्त्रीसेवन करनेसे माता बहिन सेवन करनेका पाप क्यों लगता है ?

पाँचवाँ पाठ ।

आठ मूलगुण

मूलगुण मुख्य गुणोको कहते है । कोई भी पुरुष जबतक आठ मूलगुण धारण नहीं करता; तबतक श्रावक नहीं कहला सकता है, श्रावक बननेके लिए इनको धारण करना बहुत जरूरी है । मूलनाम जड़का है, जैसे जड़के विना पेड़ नहीं ठहर सकता, उसी प्रकार विना मूलगुणोके श्रावक नहीं हो सकता ।

श्रावकके ये आठ मूलगुण है—तीन मकारका त्याग, अर्थात् मद्य त्याग, मांस त्याग, मधुका त्याग और पॉच उदुम्बर फलोका त्याग ।

१ शराब वगैरह मादक वस्तुओके सेवन करनेका त्याग करना मद्यत्याग है । अनेक पदार्थोंको मिलाकर और उनको सड़ाकर शराब बनाई जाती है । इस कारणसे उसमे बहुत जल्दी असंख्यात जीव पैदा हो जाते हैं और उसके सेवन करनेमे जीवोंकी महान् हिंसाका पाप लगता है । इसके सिवाय उसको पीकर आदमी पागलसा हो जाता है, और तो क्या शराबियोंके

मुँहमें कुत्ते भी मूत जाते हैं। इसलिए शराब तथा भंग चरस वगैरह मादक वस्तुओंका त्याग करना ही उचित है।

२ मांस खानेका त्याग करना मांस त्याग कहलाता है दो इंद्रिय आदि जीवोंके घात करनेसे मांस होता है। मांसमे अनेक जीव हर समय पैदा होते और मरते रहते हैं। मांसको छूनेसे ही वे जीव मर जाते हैं। इसलिए जो मांस खाता है, वह अनंत जीवोंकी हिंसा करता है। इसके सिवाय मांसभक्षणसे अनेक प्रकारके असाध्य रोग हो जाते है और स्वभाव: क्रूर व कठोर हो जाता है, इस कारण मांसका त्याग करना ही उचित है।

३ शहद खानेका त्याग करना मधुत्याग है। शहद मक्खियोंका वमन (कय) है। इसमें हर समय छोटे छोटे जीव उत्पन्न होते रहते हैं। बहुतसे लोग मक्खियोंके छत्तेको निचोड़कर शहद निकालते हैं। छत्तेके निचोड़नेमे उसमेंकी मक्खियॉ और उनके छोटे छोटे बच्चे मर जाते हैं और उनका सारा रस शहदमे आ जाता है जिसे देखनेसे ही घिन आती है। ऐसी अपवित्र वस्तु खाने योग्य नहीं हो सकती। उसका त्याग करना ही उचित है।

४–८ बड़, पीपर, पाकर, कठूमर, (कटहल) और गूलर इन फलोंका त्याग करना पॉच उदुम्बरोंका त्याग करना कहलाता है। इन फलोंमे छोटे छोटे अनेक त्रसजीव रहते हैं। बहुतोंमे साफ साफ दिखाई पड़ते हैं और बहुतोंमें छोटे होनेसे दिखाई नहीं पड़ते। इन फलोंके खानेसे वे सब जीव मर जाते है, इसलिए इनके खानेका त्याग करना ही उचित है।

प्रश्नावली।

१ मूलगुण किसे कहते हैं और ये गुण किसके होते हैं?

२ मूलगुण कितने होते हैं? नाम सहित बताओ।

३ एक जैनीने सर्वथा जीवहिंसाका त्याग कर दिया, तो बताओ वह इन अष्टमूलगुणोंका धारी है या नहीं?

४ मद्यसेवन करनेसे क्या क्या हानियाँ होती हैं? मांसका त्यागी मद्यसेवन करेगा या नहीं?

५ क्या सब ही फलोंके खानेमें दोष है या केवल बड़ पीपर वगैरह फलोंमें ही? और क्यों?

छट्ठा भाग।

अभक्ष्य।

जिन पदार्थोंके खानेसे त्रसजीवोंका घात होता हो, अथवा वहुत स्थावर जीवोंका घात होता हो, जो प्रमाद बढ़ानेवाले हों, और जो शरीरको अनिष्ट करनेवाला हो तथा जो भले पुरुषोंके सेवन करने योग्य नही हों वे सब अभक्ष्य हैं अर्थात् भक्षण करने योग्य नहीं हैं।

कमलकी डंडीके समान भीतरसे पोले पदार्थ जिनमें वहुतसे सूक्ष्म जीव रह सकते हैं तथा हरी मुलेठी, बेर, द्रोणपुष्प (एक प्रकारके पेड़का फूल), ऊमर, द्विदल[1] आदिके खानेमें मूली, गाजर, लहसुन, अदरक, शकरकंदी, आलू, अरवी

---

१ कच्चे दूधमें, कच्चे दहीमें, और कच्चे दूधके जमे हुए दहीकी छाछमें उड़द, मूँग, चना आदि द्विदल (दो दाल वाले) अन्नके मिलानेसे द्विदल बनता है।

(गागली, घुईयाँ), सूरण, तरबूज, तुच्छ फल (जिस फलमें वीज न पड़े हों) बिलकुल अनन्तकाय वनस्पति आदि पदार्थोंके खानेमें अनंत स्थावर जीवोंका घात होता है।

शराब, अफीम, गांजा, भंग, चरस, तंबाकू वगैरह प्रमाद बढ़ानेवाली चीजें है। भक्ष्य होनेपर भी जो हितकर (पथ्य) न हों उन्हे अनिष्ट कहते हैं। जैसे खाँसीके रोगवालेको बरफी हितकर नहीं है। जिसको उत्तम पुरुष बुरा समझे, उन्हे अनुपसेव्य कहते हैं। जैसे लार, मूत्र आदि पदार्थोंका सेवन। इनके सिवाय नवनीत (मक्खन) सूखे उदम्बर फल, चमड़ेमे रक्खे हुए हींग, घी, आदि पदार्थ। आठ पहरसे ज्यादहका संधान (आचार) व मुरब्बा, कॉजी, सब प्रकारके फूल, अजानफल, पुराने मूँग, उड़द, वगैरह द्विदलान्न, वर्षाऋतुमें पत्तेवाले शाक और विना दले हुए उडद मूँग वगैरह द्विदल अन्न भी अभक्ष्य है। चलित रस, खट्टा दही, छाछ तथा विना फाड़ी विना देखी हुई सेम, राजभाष, (रोंसा) आदिकी फली आदि भी अभक्ष्य है।

प्रश्नावली।

१ अभक्ष्य किसे कहते हैं? क्या सब ही शाक पात अभक्ष्य हैं? यदि कोई महाशय सब्जी मात्रका त्याग कर दे, परन्तु और सब चीजें खाता रहे तो बताओ वे अभक्ष्यका त्यागी है या नहीं?

२ अनिष्ट और अनुपसेव्यसे क्या समझते हो? प्रत्येकके दो दो उदाहरण दो।

३ द्विदल क्या होता है? क्या तमाम अनाज द्विदल हैं? यदि नहीं, तो कमसे कम चार द्विदल अनाजोंके नाम बताओ।

४ इनमें कौन कौन अभक्ष्य हैं:—बैंगन, दहीबड़ा, पेड़ा, गोभीका फूल, आम, मक्खन, खीरा, कमलगट्टा, आलू, कचालू, मोया, पालक, घी, गाजर, नींबूका आचार, बादाम, चिरौंजीका रायता ।

५ कुछ ऐसे अभक्ष्य पदार्थोंके नाम बताओ जिनमें त्रस जीवोंकी हिंसा होती हो ।

६ अभक्ष्य कितने हैं ? लोकमें जो बाईस अभक्ष्य प्रसिद्ध हैं, उनके विषयमें तुम क्या जानते हो ?

७ अभक्ष्यका त्यागी मूलगुणधारी है या नहीं ?

सातवाँ पाठ ।

व्रत ।

अच्छे कामोंके करनेका नियम करना अथवा बुरे कामोका छोड़ना यह व्रत कहलाता है ।

ये व्रत १२ होते हैं:—अणुव्रत ५, गुणव्रत ३, शिक्षाव्रत ४, इनको श्रावकके उत्तरगुण भी कहते है । इनका पालनेवाला श्रावक (व्रती) कहलाता हैं ।

अणुव्रत ।

हिंसा झूठ चोरी वगैरह पाँच पापोंका स्थूल रीतिसे एक-देश त्याग करना अणुव्रत कहलाता है ।

१ श्रावक स्थूल रीतीसे पापोंका त्याग करते हैं, इस कारण उनके व्रत अणुव्रत कहलाते हैं, मुनि पूर्ण रीतिसे त्याग करते हैं, इसलिए उनके व्रत महाव्रत कहलाते हैं ।

अणुव्रत ५ होते हैंः—१ अहिंसाणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ अचौर्य्याणुव्रत, ४ ब्रह्मचर्याणुव्रत, और ५ परिग्रह-परिमाणाणुव्रत।

१ प्रमादसे संकल्पपूर्वक (इरादा करके) त्रस जीवोंका घात नहीं करना, अहिंसा अणुव्रत है। अहिंसाणुव्रती 'मैं इस जीवको मारूँ' ऐसे संकल्पसे कभी किसी जीवका घात नहीं करता, न कभी किसी जीवको मारनेका विचार करता है और न वचनसे किसीसे कहता है कि तुम इसे मारो। घरबार बनाने, खेती व्यापार करने तथा शत्रुसे अपनेको बचानेमें जो हिंसा होती है उसका गृहस्थ त्यागी नहीं होता।

२ स्थूल (मोटा) झूठ न तो आप बोलना, न दूसरेसे बुलवाना और ऐसा सच भी नहीं बोलना जिसके बोलनेसे किसी जीवका अथवा धर्मका घात होता हो। भावार्थ-प्रमादसे जीवोको पीड़ाकारक वचन नहीं बोलना सो सत्य अणुव्रत है।

३ लोभ वगैरह प्रमादके वशमें आकर विना दिये हुए किसीकी वस्तुको ग्रहण नहीं करना अचौर्य अणुव्रत है। अचौर्य अणुव्रतका धारी दूसरेकी चीजको न तो आप लेता है और न उठाकर दूसरेको देता है।

४ परस्त्रीसेवनका त्याग करना ब्रह्मचर्य अणुव्रत है। ब्रह्मचर्य अणुव्रतका धारी अपनी स्त्रीको छोड़कर अन्य सब स्त्रियोंको पुत्री और वहिनके समान समझता है। कभी किसीको बुरी निगाहसे नहीं देखता है।

५ अपनी इच्छानुसार धन, धान्य, हाथी, घोड़े, नौकर,

चाकर, वर्तन, कपड़ा वगैरह परिग्रहका परिमाण कर लेना कि मैं इतना रक्खूँगा, बाकी सबका त्याग कर देना, परिग्रह-परिमाण अणुव्रत है।

गुणव्रत।

गुणव्रत उन्हे कहते हैं, जो अणुव्रतोंका उपकार करें। गुणव्रत ३ हैं—१ दिग्व्रत, २ देशव्रत, ३ अनर्थदण्डव्रत।

१ लोभ आरंभ वगैरहके त्यागके अभिप्रायसे पूरव पश्चिम वगैरह चारों दिशाओंमे प्रसिद्ध नदी, गॉव, नगर, पहाड़ वगैरहकी हद वॉध करके जन्मपर्यंत उस हदके वाहर न जानेका नियम करना दिग्व्रत कहलाता है। जैसे किसी आदमीने जन्मभरके लिए अपने आने जानेकी मर्यादा उत्तरमें हिमालय दक्षिणमें कन्याकुमारी, पूर्वमें ब्रह्मदेश और पश्चिममे सिन्धु नदी तक कर ली, अव वह जन्मभर इस सीमाके वाहर नहीं जायगा। वह दिग्व्रती है।

२ घड़ी, घंटा, दिन, महीना वगैरह नियत समय तक और जन्म पर्यंतके किए हुए दिग्व्रतमें और भी संकोच करके किसी ग्राम, नगर, घर, मोहल्ला वगैरह तक आना जाना रख लेना और उससे वाहर न जाना देशव्रत[१] है। जैसे जिस पुरुषने ऊपर लिखी सीमा नियत करके दिग्व्रत धारण किया है, वह यदि ऐसा नियम कर लेवे कि मैं भादोंके महीनेमें इस शहरके वाहर नहीं जाऊँगा अथवा आज इस

---

१ कहीं कहींपर देशव्रतको शिक्षाव्रतोंमें लिया है और भोगोपभोग परिमाण-व्रतको दिग्व्रतमें।

मकानके बाहर नहीं जाऊँगा तो उसके देशव्रत * समझना चाहिये ।

३ बिना प्रयोजन ही जिन कामोंमें पापका आरंभ हो उन कामोका त्याग करना, अनर्थदण्डव्रत है । इस व्रतका धारी न कभी किसीको वनस्पति छेदने, जमीन खोदने वगैरह पापके कामोंका उपदेश देता है, न किसीको विष (जहर) शस्त्र (हथियार) वगैरह हिंसाके उपकरणोंको माँगे देता है, न कषाय उत्पन्न करनेवाली कथाएँ सुनता है, न किसीका बुरा विचारता है, और न वेमतलब व्यर्थ जल बखेरता है । और न आग जलाता है । कुत्ता बिल्ली वगैरह जीवोंको भी जो मांस खाते हैं, नहीं पालता ।

शिक्षाव्रत ।

शिक्षाव्रत उन्हें कहते हैं जिनसे मुनिव्रत पालन करनेकी शिक्षा मिले ।

शिक्षाव्रत ४ हैं:—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ भोगोपभोगपरिमाण, ४ अतिथिसंविभाग ।

१ मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना करके नियत समय तक पाँचों पापोंका त्याग करना और सबसे

*दिग्व्रत और देशव्रतसे यह न समझना चाहिए कि सीमाओंसे बाहर [illegible] जाना अथवा संसारका ज्ञान प्राप्त करना बुरा है । इनका मतलब यह है कि हम अपने लोभ और आरम्भको जिसमें हम फँसे हुए कुछ भी [illegible] नहीं कर सकते हैं, कम करें । केवल इन्हीं इच्छाओंको कम करना [illegible] अभिप्राय है । आप चाहे अपने ज्ञानके बढ़ानेका हेतु जितना है [illegible] हद उसकी जरूर कर लें ।

राग-द्वेष छोड़कर, अपने शुद्ध आत्मस्वरूपमें लीन होना, सामायिक कहलाता है। सामायिक करनेवालेको प्रातःकाल और सायंकाल किसी उपद्रव रहित एकांत स्थानमें तथा घर, धर्मशाला अथवा मंदिरमें आसन वगैरह ठीक करके सामायिक करना चाहिये और विचारना चाहिये कि जिस संसारमें मैं रहता हूँ, अशरणरूप, अशुभरूप, अनित्य, दुःखमयी और पररूप है और मोक्ष उससे विपरीत है इत्यादि।

प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीको समस्त आरम्भ छोड़ना और विषय कषाय तथा आहार पानीका १६ पहरतक त्याग करना, प्रोषधोपवास कहलाता है। प्रोषध एक वार भोजन करने अर्थात् एकाशनका नाम है। एकाशनके साथ उपवास करना प्रोषधोपवास कहलाता है। जैसे किसी पुरुषको अष्टमीका प्रोषधोपवास करना है, तो उसे सप्तमी और नवमीको एकाशन और अष्टमीको उपवास करना चाहिये और शृंगार आरंभ, गंध, पुष्प (तेल, इतर फुलेल), स्नान, अंजन सूँघनी वगैरह चीजोंका त्याग करना चाहिये। यह उत्कृष्ट प्रोषधोपवासकी रीति है। व्रती प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशीको कमसे कम एकभुक्त करके भी धर्मध्यान कर सकता है।

३ भोजन, वस्त्र, आभूण आदि भोगोपभोग वस्तुओंको जन्मपर्यन्त अथवा कुछ कालकी मर्यादा लेकर त्याग करना

१ जो वस्तु एक बार ही सेवन करनेमें आती है, वह भोग है, जैसे भोजन और जो वस्तु बार बार भोगनेमें आती है वह उपभोग है, जैसे वस्त्र, चारपाई, स्त्री। कहीं कहींपर भोगको उपभोग और उपभोगको परिभोग भी कहा है।

भोगोपभोगपरिमाणव्रत है। जो पदार्थ अभक्ष्य हैं अथवा ग्रहण करने योग्य नहीं हैं, उनका तो सर्वथा जन्मपर्यंतके लिए त्याग करना चाहिए और जो भक्ष्य तथा ग्रहण करने योग्य हैं, उनका भी त्याग घड़ी, पहर, दिन, महीना, वर्ष वगैरह कालकी मर्यादा लेकर करना चाहिए।

४ भक्ति सहित, फलकी इच्छाके विना, धनादि हानि वगैरह श्रेष्ठ पुरुषोंको दान देना, अतिथिसंविभागव्रत है। दान चार प्रकारका है:—१ आहारदान, २ ज्ञानदान, ३ औषधदान, ४ अभयदान।

१ मुनि, त्यागी, श्रावक, व्रती तथा भूखे, अनाथ विधवाओंको भोजन देना आहारदान है।

२ पुस्तकें बाँटना, पाठशालाएँ खोलना, व्याख्यान देकर धर्म और कर्तव्यका ज्ञान कराना ज्ञानदान है।

३ रोगी मनुष्योंको औषध देना, उनकी सेवा करना औषधदान है।

४ जीवोंकी रक्षा करना अथवा मुनि त्यागी और ब्रह्मचारी लोगोंके रहनेके लिए स्थान बनवाना, अँधेरी रातमें सड़कोंपर लैम्प जलवाना, चौकी पहरा लगवाना, दुखी पुरुषोंको दुःख और संकटसे निकालना अभयदान है।

प्रश्नावली।

उदाहरण देकर समझाओ ।

२ इन प्रश्नोंका उत्तर दोः—

(क) प्रोपधोपवासके दिन क्या क्या करना चाहिये ?

(ख) ग्यारहवीं प्रतिमाधारीके व्रत अणुव्रत हैं या महाव्रत ?

(ग) सामायिक कहाँ और किस समय करनी चाहिये और सामायिक करते समय क्या विचार करना चाहिये ?

(घ) अनर्थदण्डव्रतका धारी ऐसी पुस्तके पढेगा व सुनेगा या नहीं जिनमें जीवहिंसा और युद्धका कथन हो ?

(ङ) पचाणुव्रतका पालनेवाला कौनसी प्रतिमाका धारी है ?

(च) अहिंसाणुव्रतका धारी लड़ाईमें जाकर लडेगा या नहीं ? मन्दिर, कूआ, तालाव वनवायगा या नहीं ? खेती करेगा या नहीं ?

(छ) छपी हुई पुस्तकें वॉटना, अंग्रेजी तथा शिल्पविद्याके लिये रुपया देना ज्ञानदान है या नहीं ?

(ज) गुणव्रत तथा शिक्षाव्रत विना अणुव्रतके हो सकते हैं या नहीं ?

(झ) एक पुरुपने यह नियम किया कि मैं एशिया, युरोप, अफरीका, अमेरिका, आस्ट्रेलिया अर्थात् पञ्च महाद्वीपोंके वाहर न जाऊँगा तो वताओ उसका यह दिग्व्रत है या नहीं ?

(ञ) एक पडित महाशय विना कुछ लिये दिये विद्यार्थियोंको पढाते हैं तो वताओ वे कौनसा व्रत पाल रहे हैं ?

(ट) मिथ्यात्वका नाश करने और ज्ञानका प्रकाश करनेके लिये अकलंकने आपत्ति पड़नेपर झूठ वोलकर अपने प्राणोंकी रक्षा की, वताओ उन्हें झूठका पाप लगा या नहीं ?

(ठ) सडकपर एक पैसा पड़ा था, हरिने उठाकर एक भिखारीको दे दिया, वताओ हरिने अच्छा किया या बुरा ?

(ड) साफ मालूम है कि अपराधीको फॉसीकी सजा मिलेगी, किसी सूरतसे उसके प्राण नहीं वच सकते, उसको वचानेके लिये झूठी गवाही देना अच्छा है या बुरा ?

(ढ) एक दुष्ट स्त्री सदा अपने कटु शब्दोंसे अपने पिताका जी दुखाती है बताओ वह कौनसा पाप करती है ?

(ण) एक जुआरी अपना सब रुपया हार जानेके बाद घर आकर अपनी स्त्रीसे कहने लगा कि यदि तुम्हारे पास कुछ रुपया हो तो दे दो। यद्यपि स्त्रीके पास रुपया था, परन्तु जुवेके कारण उसने कह दिया कि मेरे पास तो एक फूटी कौड़ी भी नहीं, मैं कहाँसे दूँ ? बताओ उसने झूठ बोला या सच ?

४ अतिथिसंविभागव्रत, अनर्थदण्डव्रत, और परिग्रहपरिमाणाणुव्रतसे क्या समझते हो ? उदाहरण सहित बताओ ?

आठवाँ पाठ।

ग्यारह प्रतिमा।

श्रावकोंके ११ दरजे होते हैं, उन्हें ग्यारह प्रतिमा कहते हैं। श्रावक ऊँचे ऊँचे चढ़ता हुआ एकसे दूसरी, दूसरीसे तीसरी, तीसरीसे चौथी, इसी तरह ग्यारहवीं प्रतिमा तक चढ़ता है और उससे ऊपर चढ़कर साधु या मुनि कहलाता है। अगली अगली प्रतिमाओंमें पहलेकी प्रतिमाओंकी क्रियाका होना भी जरूरी है।

दर्शनप्रतिमा—सम्यग्दर्शन सहित अतीचार रहित आठ मूलगुणोंका धारण करना और सात व्यसनोंका अतीचार सहित त्याग करना दर्शनप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी दार्शनिकश्रावक कहलाता है। वह सदा संसारसे उदासीन दृढ़चित्त रहता है और मुझे इस शुभ कामका फल मिले ऐसी वांछा नहीं रखता।

२ व्रतप्रतिमा—पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत, इन १२ व्रतोंका पालन व्रतप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी व्रती श्रावक कहलाता है।

३ सामायिकप्रतिमा—प्रतिदिन प्रातःकाल, मध्यान्हकाल और सायंकाल अर्थात् सवेरे, दुपहर शामको दो दो घड़ी विधिपूर्वक[१] निरतिचार सामायिक करना सामायिकप्रतिमा है।

४ प्रोषधप्रतिमा—हरएक अष्टमी और चतुर्दशीको १६ पहरका अतिचार रहित उपवास अर्थात् प्रोषधोपवास करना और गृह, व्यापार, भोग, उपभोगका तमाम सामग्रीका त्याग करके एकांतमें बैठकर धर्मध्यानमे लगना, प्रोषधप्रतिमा है। मध्यम १२ और जघन्य ८ पहरका प्रोषध होता है।

५ सचित्तत्यागप्रतिमा—हरी वनस्पति अर्थात् कच्चे फल फूल बीज पत्ते वगैरहको न खाना सचित्तत्यागप्रतिमा है।

---

१ सामायिक करनेकी विधि यह है.—पहले पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके खड़ा होकर नौ बार णमोकार मन्त्र पढ दण्डवत् करे, फिर उसी तरफ खडे होकर तीन दफे णमोकार मन्त्र पढ तीन आवर्त और एक नमस्कार (शिरोनति) करे और फिर क्रमसे दक्षिण पश्चिम और उत्तर दिशाकी ओर तीन तीन आवर्त्त और एक एक नमस्कार करे अनन्तर पूर्व दिशाकी ओर मुँह करके खड़े होकर अथवा बैठकर मन वचन कायको शुद्ध करके पाँचों पापोंका त्याग करे, सामायिक पढे, किसी मन्त्रका जप करे अथवा भगवानकी शान्त मुद्राका या चैतन्य मात्र शुद्ध स्वरूपका अथवा कर्म-उदयके रसकी जातिका चिन्तवन करे, फिर अन्तमें खड़ा हो ९ दफे मन्त्र पढ दण्डवत करे सामायिकका उत्कृष्ट समय ६ घड़ी, मध्यम ४ घड़ी और जघन्य २ घडी है २४ मिनटकी एक घड़ीहोती है।

जिसमें जीव होते हैं उसे सचित्त कहते हैं। अतएव ऐसे पदार्थको जिसमें जीव हों न खाना सचित्तत्यागप्रतिमा है।

६ रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा—कृत कारित अनुमोदनासे और मन वचन कायसे रात्रिमें हरएक प्रकारके आहारका त्याग करना अर्थात् सूरज छिपनेके २ घड़ी पहलेसे सूरज निकलनेके २ घड़ी पीछे तक आहार पानीका बिलकुल त्याग करना, रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा है।

कहीं कहींपर इस प्रतिमाका नाम दिवामैथुन त्याग प्रतिमा भी है। अर्थात् दिनमें मैथुनका त्याग करना।

७ ब्रह्मचर्यप्रतिमा—मन वचन कायसे स्त्री मात्रका त्याग करना ब्रह्मचर्यप्रतिमा है।

८ आरंभत्यागप्रतिमा—मन वचन कायसे और कृत कारित अनुमोदनासे गृह-कार्य संबंधी सब तरहकी क्रियाओंका त्याग करना, आरंभत्यागप्रतिमा है। आरंभत्याग प्रतिमावाला स्नान दान पूजन वगैरह कर सकता है।

९ परिग्रहत्यागप्रतिमा—धन धान्यादि परिग्रहको पापका कारणरूप जानते हुए आनंदसे उनका छोड़ना परिग्रहत्याग-प्रतिमा है।

१० अनुमतित्यागप्रतिमा—गृहस्थाश्रमके किसी भी कार्यका अनुमोदन नहीं करना, अनुमतित्यागप्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी उदासीन होकर घरमें या चैत्यालय या मठ वगैरहमें बैठता है। घरपर या और जो कोई श्रावक भोजनके लिए

बुलावे उसके यहाँ भोजन कर आता है। किन्तु अपने मुँहसे यह नहीं कहता कि मेरे वास्ते वह चीज बनाओ।

११ उद्दिष्टत्यागप्रतिमा—घर छोड़कर बनमें या मठ वगैर-हमें तपश्चरण करते हुए रहना, खण्डवस्त्र धारण करना, विना याचना किये भिक्षावृत्तिसे योग्य उचित आहार लेना उद्दिष्ट-त्यागप्रतिमा है। इस प्रतिमाधारीके दो भेद हैं:—१ क्षुल्लक २ ऐलक। क्षुल्लक अपने शरीरपर छोटी चादर रखते हैं पर ऐलक लंगोटी मात्र रखते हैं।

प्रश्नावली।

१ प्रतिमा किसे कहते हैं ? और इसके कितने भेद हैं ? नाम सहित बताओ। भगवानकी मूर्तिको भी प्रतिमा कहते हैं, बतलाओ उक्त प्रतिमा शब्दका इससे कुछ सम्बन्ध है या नहीं ?

२ प्रतिमाओंका पालन कौन करता है ? किसी प्रतिमाके पालन करनेके लिए उससे पहलेकी प्रतिमाओंका पालन करना जरूरी है या नहीं ?

३ एक आदमी अभी तक किसी भी प्रतिमाका पालन नहीं करता था परन्तु अब उसने पहली प्रतिमा धारण कर ली, तो बताओ उसने पहलेसे क्या उन्नति कर ली ?

४ निम्न लिखित कौन प्रतिमाओंके धारी हैं ? ब्रह्मचारी, पर्वोंके दिन प्रोषधोपवास करनेवाला, घरका कोई भी काम न करके तमाम दिन धर्मध्यान करनेवाला, स्त्री मात्रका त्याग करनेवाला, एक लगोटीके सिवाय और किसी तरहका परिग्रह न रखनेवाला।

५ ये ऊँचीसे ऊँची कौनसी प्रतिमाओंका पालन कर सकते हैं—गृहस्थ, स्त्री, पुरुष, पशु, पक्षी।

६ कोट बूट पतलून पहिनते हुए, सौदागिरी करते हुए, रेलमें सफर करते हुए, लंदनमें रहते हुए, लड़ाईके मैदानमें लड़ते हुए, वकालात, अध्यापकी, वैद्यक, ज्योतिषी, सम्पादकी करते हुए, राज्य और न्याय करते हुए, कौनसी प्रतिमाका पालन हो सकता है ?

७ इन प्रश्नोंके उत्तर दोः—

(क) सातवीं प्रतिमाधारी स्त्रियोंके बीच खड़ा होकर व्याख्यान दे सकता है या नहीं ?

(ख) दसवीं प्रतिमाधारीको यदि कोई भोजनका बुलावा दे तो उसके यहाँ जाय या नहीं ?

(ग) ग्यारहवीं प्रतिमाधारी पाठशाला खुलवा सकता है या नहीं ? उसके लिए रुपया देनेको अनुमोदना करेगा या नहीं तथा रेल, घोड़े, गाड़ी वगैरहमें बैठेगा या नहीं ?

(घ) आठवीं प्रतिमाका धारी मंदिर बनानेकी सलाह देगा या नहीं तथा पूजन करेगा या नहीं ?

(ङ) उद्दिष्टत्यागप्रतिमाधारी किसीसे धर्म पुस्तक अर्थात् शास्त्रके लिए याचना करेगा या नहीं ? कोई पुस्तक लिखेगा या नहीं ? रोग हो जानेपर किसीसे उसका जिक्र करेगा या नहीं ?

(च) दूसरी प्रतिमाधारीके लिए तीनों समय समायिक करना जरूरी है या नहीं ?

(छ) प्लेग आ जानेपर पहली प्रतिमाका धारी प्लेगग्रसित स्थानको छोड़ेगा या नहीं अथवा किसी सम्बन्धीके मरनेपर रोयेगा या नहीं ?

(ज) जिस स्थानपर कोई जैनी न हो तथा जैनमदिर न हो वहाँ प्रतिमाधारी रहेगा या नहीं ?

(झ) सामायिककी क्या विधि है, इसका करना कौनसी प्रतिमाधारीके लिए आवश्यक है ?

(ञ) सचित्त किसे कहते हैं ? कच्चे फल फूल सचित्त हैं या नहीं ?

(ट) दूसरी प्रतिमाका धारी रातको भोजन करेगा या नहीं ? यदि नहीं तो छट्ठी प्रतिमा रात्रिभोजनत्याग क्यों रक्खी है ?

(ठ) सातवीं प्रतिमाधारी मनुष्य क्या क्या काम करेगा और क्या क्या नहीं करेगा ?

(ड) ग्यारहवीं प्रतिमाधारी श्रावक है मुनि ? उसके पास क्या क्य वस्तुएँ होती हैं ?

नौवाँ पाठ ।

तत्त्व और पदार्थ ।

तत्त्व सात होते हैं:—१ जीव, २ अजीव ३ आस्रव, ४ बंध, ५ संवर, ६ निर्जरा, ७ मोक्ष ।

जीव

जीव उसे कहते हैं, जो जीवे, जिसमे चेतना हो अथवा जिसमे प्राण हो। पाँच इंद्रिय, तीन बल (मनबल, वचनबल, कायबल) आयु और श्वासोच्छ्वास, ये दस द्रव्यप्राण तथा ज्ञान दर्शन ये भावप्राण हैं। जिसमें ये पाये जाते हैं वे जीव[1] कहलाते है। जैसे मनुष्य देव, पशु पक्षी वगैरह।

अजीव

अजीव[2] उसे कहते हैं जिसमे चेतना गुण न हो अथवा जिसमें कोई प्राण न हो। जैसे लकड़ी पत्थर वगैरह।

आस्रव

आस्रव बंधके कारणको कहते हैं। इसके २ भेद हैं:— १ भावास्रव, २ द्रव्यास्रव। जैसे किसी नावमे कोई छेद हो जाय और उसमेसे उस नावमें पानी आने लगे, इसी प्रकार

---

१ एक इन्द्रिय जीवमें स्पर्शन इन्द्रिय, आयु कायबल और श्वासोच्छ्वास, ये चार प्राण होते हैं दो इद्रिय जीवमें रसना (जिह्वा) इन्द्रिय और वचन बल मिलाकर ६ प्राण होते हैं। तीन इन्द्रिय जीवमें नासिका (नाक) इंद्रिय बढकर सात प्राण हैं। चार इन्द्रिय जीवमें चक्षु (आँख) इन्द्रिय बढकर ८ प्राण हैं। पचेन्द्रिय सज्ञीजीवमें मन मिलाकर पूरे दस प्राण होते हैं।

२ अजीवके पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ५ भेद हैं, जिनका कथन तीसरे भागमें आ चुका है।

आत्माके निज भावोंसे कर्म आते हैं उन्हें भावास्रव कहते हैं और शुभ अशुभ पुद्गलके परमाणुओंको द्रव्यास्रव कहते हैं।

आस्रवके मुख्य ४ भेद हैं:—१ मिथ्यात्व, २ अविरति, ३ कषाय, ४ योग, इन्हीं चार खास कारणोंसे कर्मोंका आश्रव होता है।

१ मिथ्यात्व—संसारकी सब वस्तुओंसे जो अपनी आत्मासे अलग हैं राग और द्वेष छोड़कर केवल अपनी शुद्ध आत्माके अनुभवमें निश्चय करनेको सम्यक्त्व कहते हैं। यही आत्माका असली भाव है, इससे उल्टे भावको मिथ्यात्व कहते हैं। मिथ्यात्वकी वजहसे संसारी जीवमें तरह तरहके भाव पैदा होते हैं और इसीसे मिथ्यात्व कर्मबंधका कारण है। इसके ५ भेद हैं:—१[1] एकांत, २ विपरीत, ३ विनय, ४ संशय, ५ अज्ञान।

२ अविरति—आत्माके अपने स्वभावसे हटकर और और विषयोंमें लगना अविरति है। छह कायके जीवोंकी हिंसा करना और पाँच इंद्रिय और मनको वशमें नहीं करना अविरति है।

३ कषाय—जो आत्माको कषे अर्थात् दुःख दे, वह कषाय है। इसके २५ भेद हैं:—अनंतानुबंधी क्रोध, मान.

---

१ वस्तुमें रहनेवाले अनेक गुणोंका विचार न करके उसका एक ही रूप श्रद्धान करना एकान्तमिथ्यात्व है। २ उलटा श्रद्धान करना विपरीतमिथ्यात्व है। ३ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रकी अपेक्षा न करके [illegible] बराबर विनय और आदर करना विनयमिथ्यात्व है। ४ पदार्थोंके स्वरूपमें संशय (शुबह) रहना संशयमिथ्यात्व है। ५ हित अहितकी [illegible] विना ही श्रद्धान करना अज्ञानमिथ्यात्व है। ६ कषायोंका विशेष [illegible] कर्मप्रकृतियोंमें किया जायगा।

माया, लोभ, अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद।

४ योग—मनमें कुछ सोचनेसे या जिह्वासे कुछ बोलनेसे या शरीरसे कोई काम करनेसे हमारे मन, जिह्वा और शरीरमें हलन चलन होता है और इनके हिलनेसे हमारी आत्मा भी हिलती है। यही योग कहलाता है। आत्मामें हलन चलन होनेसे ही कर्मोंका आस्रव होता है। योगके १५ भेद हैं—१ सत्यमनोयोग, २ असत्यमनोयोग, ३ उभयमनोयोग, ४ अनुभयमनोयोग, ५ सत्यवचनयोग, ६ असत्यवचनयोग, ७ उभयवचनयोग, ८ अनुभयवचनयोग, ९ औदारिककाययोग, १० औदारिकमिश्रकाययोग, ११ वैक्रियककाययोग, १२ वैक्रियकमिश्रकाययोग, १३ आहारककाययोग, १४ आहारकमिश्रकाययोग, १५ कार्माणयोग।

इस प्रकार ५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २५ कषाय, १५ योग कुल मिलाकर आस्रवके ५७ भेद हैं।

बंध।

बंधके भी दो भेद हैं—१ भावबंध, २ द्रव्यबंध। आत्माके जिन बुरे भावोंसे कर्मबंध होता है, उसको तो भावबंध कहते हैं और उन विकार भावोंके कारण जो कर्मके पुद्गल परमाणु आत्माके प्रदेशोंके साथ दूध और पानीके समान एकमेक होकर मिल जाते हैं, उसे द्रव्यबंध कहते हैं। मिथ्यात्व

अविरति, आदि परिणामोंके कारण कर्म आते हैं। और वे आत्माके प्रदेशोंके साथ मिल जाते हैं। जैसे धूल उड़कर गीले कपड़ेमें लग जाती है।

वंध और आस्रव साथ साथ एक ही समयमें होता है तथापि इनमें कार्य-कारणभाव है, इसलिए जितने आस्रव हैं उन सवको वंधके कारण समझना चाहिए।

संवर।

आस्रवका न होना अथवा आस्रवका रोकना, अर्थात नष्ट कर्मोंका नहीं आने देना, संवर है।

जैसे जिस नावमें छेद हो जानेसे पानी आने लगा था अगर उस नावके छेद वंद कर दिये जायँ तो उसमें पानी आना वंद हो जायगा, इसी प्रकार जिन परिणामोंसे कर्म आते हैं, वे न होने पावे और उनकी जगहमे उनसे उल्टे परिणाम हों, तो कर्मोंका आना वंद हो जायगा। यही संवर है। इसके भी भावसंवर और द्रव्यसंवर दो भेद हैं। जिन परिणामोंसे आस्रव नहीं होता है, वे भावसंवर कहलाते हैं और उनसे जो पुद्गल परमाणु कर्मरूप होकर आत्मासे नहीं मिलते हैं, उसको द्रव्यसंवर कहते हैं।

यह संवर ३ गुप्ति, ५ समिति, १० धर्म, १२ अनुप्रेक्षा २२ परीषहजय और ५ चारित्रसे होता है अर्थात् संवरके गुप्ति, समिति, अनुप्रेक्षा परीषहजयचारित्र ये ५ मुख्य भेद हैं।

गुप्ति—मन, वचन और कायसे हलन चलनको रोकना, ये तीन गुप्ति हैं।

समिति*—ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण, उत्सर्ग ये पाँच समिति हैं।

धर्म—उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य ये दस धर्म हैं।

अनुप्रेक्षा—वार वार चिंतवन करनेको अनुप्रेक्षा कहते हैं। अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, वोधिदुर्लभ, धर्म ये १२ अनुप्रेक्षा हैं। इनको १२ भावना भी कहते हैं।

१ अनित्यभावना—ऐसा विचार करना कि संसारकी तमाम चीजें नाश हो जानेवाली हैं, कोई भी नित्य नहीं है।

२ अशरणभावना—ऐसा विचार करना कि जगत्मे कोई शरण नहीं है और मरणसे कोई वचानेवाला नहीं है।

३ संसारभावना—ऐसा चिंतवन करना कि यह संसार असार है, इसमे जरा भी सुख नहीं है।

४ एकत्वभावना—ऐसा विचार करना कि अपने अच्छे बुरे कर्मोंके फलको यह जीव अकेला ही भोगता है, कोई सगा साथी नहीं बटा सकता।

५ अन्यत्वभावना—ऐसा विचार करना कि पुत्र, स्त्री वगैरह संसारकी कोई भी वस्तु अपनी नहीं है।

६ अशुचिभावना—ऐसा विचार करना कि यह देह अपवित्र और घिनावनी है, इससे कैसे प्रीति करना चाहिए?

७ आस्रवभावना—ऐसा चिंतवन करना कि मन वचन

---

* समिति और १० धर्मोंका स्वरूप पूर्वमें दिया जा चुका है।

कायके हलन चलनसे कर्मोंका आस्रव होता है सो बहुत दुखदाई है, इससे बचना चाहिए।

८ संवरभावना—ऐसा विचार करना कि संवरसे यह जीव संसार-समुद्रसे पार हो सकता है, इसलिए संवरके कारणोंको ग्रहण करना चाहिए।

९ निर्जराभावना—ऐसा विचार करना कि कर्मोंका कुछ दूर होना निर्जरा है, इसलिए इसके कारणोंको जानकर कर्मोंको दूर करना चाहिए।

१० लोकभावना—लोकके स्वरूपका विचार करना कि कितना बड़ा है, उसमें कौन कौन जगह है और किस किस जगह क्या क्या रचना है और उससे संसार-परिभ्रमणकी हालत मालूम करना।

११ बोधिदुर्लभभावना—ऐसा विचार करना कि मनुष्य-देह बड़ी कठिनाईसे प्राप्त हुई है, इसको पाकर बेमतलब न खोना चाहिए, किंतु रत्नत्रयको (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र) धारण करना चाहिए।

१२ धर्मभावना—धर्मके स्वरूपका चिंतन करना कि इसीसे इसलोक और परलोकके सब तरहके सुख मिल सकते हैं।

परीषह—मुनि कर्मोंकी निर्जरा, और कायक्लेश, करनेके लिये समताभावोंसे जो स्वयं दुःख सहन करते हैं उन्हें परीषह[1] कहते हैं।

---

१ परीषहसे परीषह-सहन समझना चाहिए।

परीषह २२ हैं—क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंश-मसक, नग्न, अरति, स्त्री, चर्या, आसन, शय्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार–पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अदर्शन।

१ भूखके सहन करनेको क्षुधापरीषह कहते हैं।

२ प्यासके सहन करनेको तृषापरीषह कहते हैं।

३ सर्दीका दुःख सहन करनेको शीतपरीषह कहते हैं।

४ गर्मीके दुःख सहन करनेको उष्णपरीषह कहते हैं।

५ डाँस, मच्छर, बिच्छू वगैरह जीवोंके काटनेके दुःख सहन करनेको दंश–मसकपरीषह कहते हैं।

६ नंगे रहकर भी लज्जा, ग्लानि और विकार नहीं करनेको नग्नपरीषह कहते हैं।

७ अनिष्ट वस्तु पर भी द्वेष नहीं करनेको अरतिपरीषह कहते हैं।

८ ब्रह्मचर्यव्रत भंग करनेके लिये स्त्रियोंके द्वारा अनेक उपद्रव होनेपर भी विकार नहीं करना स्त्रीपरीषह है।

९ चलते समय पैरमें कटीली घास कंकर चुभ जानेका दुःख सहन करना चर्यापरीषह है।

१० देर तक एक ही आसनसे बैठे रहनेका दुःख सहन करना, आसनपरीषह है।

११ कंकरीली जमीन अथवा पत्थरपर एक ही करवटसे सोनेका दुःख सहन करना, शय्यापरीषह है।

१२ किसी दुष्ट पुरुषके गाली वगैरह देनेपर भी क्रोध न करके क्षमा धारण करना, आक्रोशपरीषह है।

१३ किसी दुष्ट पुरुष द्वारा मारे पीटे जानेपर भी क्रोध और क्लेश नहीं करना, वधपरीषह है।

१४ भूख प्यास लगने अथवा रोग हो जानेपर भी भोजन औषधादि वगैरह नहीं माँगना, याचनापरीषह है।

१५ भोजन न मिलने अथवा अंतराय हो जानेपर क्लेश न करना, अलाभपरीषह है।

१६ बीमारीका दुःख न करना रोगपरीषह है।

१७ शरीरमे काँच, सुई, काँटे, वगैरहके चुभ जानेका दुःख सहन करना तृणस्पर्शपरीषह है।

१८ शरीरमें पसीना आजाने अथवा धूल मिट्टी लग जानेका दुःख सहन करना और स्नान नहीं करना, मलपरीषह है।

१९ किसीके आदर सत्कार अथवा विनय प्रणाम वगैरह न करनेपर बुरा न मानना, सत्कारपुरस्कारपरीषह है।

२० अधिक विद्वान् अथवा चारित्रवान् हो जानेपर भी मान न करना, प्रज्ञापरीषह है।

२१ अधिक तपश्चरण करनेपर भी अवधिज्ञान आदि न होनेसे क्लेश न करना, अज्ञानपरीषह है।

२२ बहुत काल तक तपश्चरण करनेपर भी कुछ फलकी प्राप्ति न होनेसे सम्यग्दर्शनको दूषित न करना अदर्शनपरीषह है।

चारित्र—आत्मस्वरूपमे स्थित होना चारित्र है। इसके

५ भेद हैं:—सामायिक[1], छेदोपस्थापना[2], परिहारविशुद्ध[3], सूक्ष्मसांपराय[4], यथाख्यात[5]।

निर्जरा।

कर्मोंका थोड़ा थोड़ा भाग क्षय होते जाना निर्जरा है। जैसे नावमे पानी भर गया था, उसे थोड़ा थोड़ा करके वाहर फेकना, इसी प्रकार आत्माके जो कर्म इकट्ठे हो रहे हैं, उनका थोड़ा थोड़ा क्षय होना निर्जरा है। इसके भी दो भेद हैं—१ भावनिर्जरा, २ द्रव्यनिर्जरा। आत्माके जिस भावसे कर्म अपना फल देकर नष्ट होता है, वह भावनिर्जरा है और समय पाकर तपसे नाश होना द्रव्यनिर्जरा है।

मोक्ष।

सब कर्मोंका क्षय हो जाना मोक्ष है। जैसे एक नावका भरा हुआ पानी वाहर फेका जाय तो ज्यो ज्यों उसका पानी बाहर फेंका जाता है त्यो त्यों वह नाव ऊपर आती जाती है, यहाँ तक कि बिलकुल पानीके ऊपर आ जाती है,

---

१ सब जीवोंमें समता भाव रखना, सुख दुःखमें समान रहना, शुभ अशुभ विकल्पोंका त्याग करना, सामायिकचारित्र है। २ सामायिकसे डिग जानेपर फिर अपनेको अपनी शुद्ध आत्माको अनुभवमें लगाना तथा व्रतादिकमें भग पड़नेपर प्रायश्चित्त वगैरह लेकर सावधान होना, छेदोपस्थापनाचारित्र है। ३ रागद्वेषादि विकल्पोंका त्यागकर अधिकताके साथ आत्म-शुद्धि करना परिहारविशुद्धिचारित्र है। ४ अपनी आत्माको कषायसे रहित करते करते सूक्ष्मलोभ कषाय नाम मात्रको रह जाय, उसको सूक्ष्मसापराय कहते हैं। उसके भी दूर करनेकी कोशिश करना सूक्ष्मसाम्परायचारित्र है। ५ कषाय रहित जैसा निष्कप आत्माका शुद्ध स्वभाव है, वैसा होकर उसमें मग्न होना यथाख्यातचारित्र है।

इसी प्रकार संवरपूर्वक निर्जरा होते होते, जब सब कर्मोंका क्षय हो जाता है और केवल आत्माका शुद्ध स्वरूप रह जाता है, तभी वह आत्मा ऊर्ध्वगमनस्वभाव होनेसे तीनों लोकोंके ऊपर जा विराजमान होता है और इसीका नाम मोक्ष है।

पदार्थ।

इन्हीं सात तत्त्वोंमे पुण्य और पाप मिलानेसे ९ पदार्थ कहलाते हैं।

पुण्य।

पुण्य उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवोंको इष्ट वस्तु सुख सामग्री वगैरह मिले। जैसे किसी आदमीको व्यापारमें खूब लाभ हुआ, घरमें एक पुत्र भी पैदा हुआ और पढ़ लिखकर उच्चपदपर नियत हुआ, ये सब पुण्यके उदयसे समझना चाहिए।

पाप।

पाप उसे कहते हैं कि जिसके उदयसे जीवोंको दुःख देनेवाली चीजें मिलें। जैसे कोई रोग हो गया अथवा पुत्र मर गया अथवा धन चोरी चला गया, ये सब पापके उदयसे समझना चाहिये।

विद्या और जातिकी वढ़वारी करना, परोपकार करना, धर्मका पालन करना ऐसे कामोंसे पुण्यका बंध होता है और जूआ खेलना, झूठ बोलना, चोरी करना, दूसरेका बुरा विचारना ऐसे बुरे कामोंसे पापका बंध होता है।

प्रश्नावली।

१ प्राण कितने होते हैं? जीवमें ही होते हैं या अजीव में भी? देव, पचेन्द्रिय, असैनी, तिर्यंच, वृक्ष, नारकी, स्त्री, मक्खी और चींटीके कौन कौन प्राण हैं?

२ प्राण रहित पदार्थोंके कितने भेद हैं नाम सहित बताओ?

३ भावास्रव, द्रव्यास्रव तथा भावनिर्जरा, द्रव्यनिर्जरामें, क्या भेद है, उदाहरण देकर बताओ तथा यह भी बताओ कि जहॉ भावास्रव होता है, वहॉ द्रव्यास्रव होता है या नहीं?

४ बंध किसे कहते हैं? इसके कौन कौन कारण हैं? और ऐसे कौन कौन कारण हैं जिनसे बन्ध नहीं होता?

५ निर्जरा और मोक्षमें क्या फरक है? पहले निर्जरा होती है या मोक्ष?

६ मिथ्यात्व, योग, गुप्ति, आदाननिक्षेपणसमिति, अनुप्रेक्षा, चारित्र, अदर्शनपरीषहजय, लोकभावना, संशयमिथ्यात्वसे क्या समझते हो?

७ बताओ इन साधुओंने कौन परीषह सहन की?

(क) एक तपस्वी गर्मीके दिनोंमें दोपहरके समय एक पहाड़पर ध्यान लगाये बैठे हैं। प्याससे गला सूख गया है, ढाई घटे हो गये हैं, बराबर एक ही आसनसे बैठे हैं।

(ख) सुकुमालका आधा शरीर गीदडने खा लिया।

(ग) एक मुनि महाराजको एक दुष्ट राजाने पकड़वाकर कैदमें डलवा दिया, वहॉपर एक सॉपने उन्हें काट खाया।

(घ) जिस समय रामचन्द्रजी ध्यानारूढ थे, सीताके जीवने स्वर्गसे आकर अपने अनेक हाव भावसे उनको मोहित करनेकी बहुत कुछ कोशिश की, मगर वे अपने ध्यानसे विचलित न हुए।

(ङ) एक साधु धर्मोपदेश दे रहे थे। कुछ शराबियोंने आकर उनको गालियॉ दीं और उनपर पत्थर बरसाये।

(च) राजा श्रेणिकने एक मुनिके गलेमें मरा हुआ सॉंप डाल दिया था जिसके सम्बन्धसे बहुतसे कीड़े मकोड़े उनके शरीरपर चढ गये।

(छ) एक तपस्वीको खुजलीका रोग हो गया जिससे तमाम शरीरमें बड़े बड़े जखम (फोड़े) हो गये, परन्तु उन्होंने किसीसे दवा नहीं माँगी।

८ निम्न लिखित प्रश्नोंके उत्तर दो:—

(क) जीवनतत्त्व और तत्त्वोंसे क्या सम्बन्ध है और कब तक है?

(ख) क्या कभी ऐसी हालत हो सकती है कि जब आस्रव और बंध बिलकुल न हों, केवल निर्जरा ही हो।

(ग) बंध जो कहनेमें आता है, सो किस चीजका होता है?

(घ) संवरभावनामें क्या चिंतवन किया जाता है?

(ङ) यथाख्यातचारित्रके आस्रव और बंध होते हैं या नहीं?

(च) पहले आस्रव होता है या बंध?

(छ) परीषह कौन सहन कर सकते हैं और एक समयमें एक ही परीषह सहन होती है या ज्यादह भी?

९ पुण्य पाप किसे कहते हैं और कैसे कैसे काम करनेसे वे होते हैं?

१० निम्नलिखित कामोंसे पुण्य होगा या पाप?

(क) एक मनुष्यने एक शहरमें जहाँ १० मंदिर थे और उनमेंसे दो तीन खंडहर हो गये थे और तीनमें पूजा प्रक्षालनका भी कोई प्रबन्ध न था, वहाँ अपना नाम करनेके लिए ग्यारहवाँ मन्दिर बनवा दिया, पूजनके लिए चार रुपये महीनेका पुजारी नौकर रख दिया।

(ख) एक सेठ हररोज बड़े नम्र भावोंसे दर्शन, पूजन, सामायिक स्वाध्याय करते हैं।

(ग) एक धनीने एक दूरके गांवके टूटे फूटे मंदिरको ठीक कराया और किसीको भी यह जाहिर न किया कि हमने इतना रुपया वहाँ लगाया है।

(घ) एक जैनीने पूरे ६०००) रुपयोंमें अपनी बेटीको बेचकर रथ चलाया और सिंघई पदवी प्राप्त की।

(ङ) यह विचारकर रिश्वत (घूंस) लेना कि इसको धर्मके कामोंमें लगायँगे।

(च) एक पंडितमहाशय किसी बातको न समझ सके, उन्होंने यह तो नहीं कहा कि मैं इसे नहीं समझता हूँ किन्तु उलटी तरहसे समझा दिया।

(छ) एक विद्यार्थीने पुस्तकोंके लिए अपने माता पिताने कुछ दान

माँगे, परन्तु उन्होंने देनेसे इन्कार किया, विद्यार्थीने दूकानमेंसे पैसे चुराकर पुस्तकें मोल ले ली।

(ज) पाठशालाएँ खुलवानेसे, भट्टारक बनकर धर्म-ध्यान कुछ भी न करके मजेसे चैन उड़ानेसे, ऐसे भट्टारकोंकी वैयावृत्ति करनेसे धर्मके लिए झूठ बोलनेसे, बालबच्चोंको न पढानेसे, अनाथालय औषधालय खुलवानेसे हिंसक मनुष्योंके साथ सम्बन्ध रखनेसे, निर्धन भाइयोंकी सहायता करनेसे, पेटके लिये भीख माँगनेसे, विद्या उपार्जन करनेके लिये अन्य देशोंमें जानेसे, झूठी हाँ में हाँ मिलानेसे, विद्यार्थियोंको वजीफे देकर पढनेसे, जवान भाई बंधुओंके मरनेपर उधार लेकर भाइयोंको लड्डू खिलानेसे, बच्चोंकी छोटी उम्रमें शादी करनेसे, धर्मादेके रुपयोंको व्यर्थ खर्च करनेमें, बेटीपर रुपया लेकर अयोग्य वर ब्याहनेसे, मांसाहारियोंमें दयाधर्मकी पुस्तकें बाँटनेसे, स्त्रियोंको पढानेसे।

दसवाँ पाठ।

कर्मोंकी उत्तरप्रकृतियाँ।

कर्मकी मूल प्रकृतियाँ ८ हैं और उत्तरप्रकृतियाँ १४८ हैं। ज्ञानावरणकी ५, दर्शनावरणकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २८, आयुकी ४, नामकी ९३, गोत्रकी २ और अंतरायकी ५।

ज्ञानावरणकर्म—मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण ये पाँच ज्ञानावरणकर्मके भेद अथवा प्रकृतियाँ हैं।

---

१ इन्द्रियों तथा मनसे जो कुछ जाना जाता है उसे मतिज्ञान कहते हैं।

२ मतिज्ञानसे जानी हुई वस्तुके सम्बन्धसे अन्य बातको जानना श्रुतज्ञान है। ये दोनों ज्ञान चाहे ज्यादह चाहे कम हरएक जीवके होते हैं।

१ मतिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मतिज्ञानको न होने दे अथवा मतिज्ञानका आवरण या घात करे।

२ श्रुतज्ञानावरण उसे कहते हैं जो श्रुतज्ञानका घात करे।

३ अवधिज्ञानावरण उसे कहते हैं जो अवधिज्ञानका घात करे।

४ मनःपर्ययज्ञानावरण उसे कहते हैं जो मनःपर्ययज्ञानका घात करे।

५ केवलज्ञानावरण उसे कहते हैं जो केवलज्ञानका घात करे।

दर्शनावरणकर्म—चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधि दर्शनावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, और स्त्यानगृद्धि, ये ९ दर्शनावरणकर्मकी प्रकृतियाँ हैं।

चक्षुदर्शनावरण उसे कहते हैं जो चक्षुदर्शन (आँखोंसे देखना) न होने दे।

अचक्षुदर्शनावरण उसे कहते हैं जो अचक्षुदर्शन न होने दे।

अवधिदर्शनावरण उसे कहते हैं जो अवधिदर्शन न होने दे।

---

१ बिना इन्द्रियोंकी सहायताके आत्मिक-शक्तिसे रूपी पदार्थोंके जाननेको अवधिज्ञान कहते हैं, यह पंचेन्द्रिय सैनी जीवके ही होता है। २ बिना इन्द्रियोंकी सहायताके दूसरेके मनकी बात जान लेनेको मनःपर्ययज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान मुनिके ही हो सकता है। ३ लोक अलोककी, भूत भविष्यत् और वर्तमान कालकी सब वस्तुओंको और उनके सर्व गुण पर्यायों (हालतों) को एक साथ जाननेको केवलज्ञान कहते हैं। केवलज्ञानीके जानने कोई वस्तु बची नहीं रहती। ४ आँखके सिवाय बाकी इन्द्रियों तथा मनसे किसी वस्तुकी सत्तामात्र (मौजूदगी) को देखना।

केवलदर्शनावरण उसे कहते हैं जो केवदर्शन न होने दे।

निद्रा उसे कहते हैं जिसके उदयसे नींद आवे।

निद्रानिद्रा उसे कहते हैं जिसके उदयसे पूरी नींद लेकर भी फिर सोवे।

प्रचला उसे कहते जिसके उदयसे बैठे ही सो जाय अर्थात् सोता भी रहे और कुछ जागता भी रहे।

प्रचलाप्रचला उसे कहते हैं जिसके उदयसे सोते हुए मुखसे लार बहने लगे और कुछ आंगोपांग भी चलते रहें।

स्त्यानगृद्धि उसे कहते हैं जिसके उदयसे नींदमें ही अपनी शक्तिसे बाहर कोई काम कर ले और जागनेपर मालूम भी न हो कि मैंने क्या किया है।

वेदनीयकर्म—सातावेदनीय और असातावेदनीय, ये दो वेदनीयकर्मके भेद हैं। इनके दूसरे नाम सद्वेद और असद्वेद हैं।

सातावेदनीय उसे कहते हैं कि जिसके उदयसे इंद्रियजन्य सुख हो।

असातावेदनीय उसे कहते हैं जिसके उदयसे दुःख हो।

मोहनीयकर्म—मोहनीयकर्मके मूल दो भेद हैं।

१ दर्शनमोहनीय, चारित्रमोहनीय।

दर्शनमोहनीय उसे कहते हैं जो आत्माके सम्यग्दर्शन[१] गुणका घात करे।

चारित्रमोहनीय उसे कहते हैं जो आत्माके चारित्र गुणका घात करे।

---

१ तत्त्वोंके सच्चे श्रद्धान याने विश्वास-यकीन करनेको सम्यग्दर्शन कहते हैं।

दर्शनमोहनीयके ३ भेद हैं:—मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति।

मिथ्यात्व उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीवके यथार्थ तत्त्वोंका श्रद्धान न हो।

सम्यग्मिथ्यात्व उसे कहते हैं जिसके उदयसे मिले हुए परिणाम हों जिनको न तो सम्यक्त्वरूप ही कह सकते हैं और न मिथ्यात्वरूप।

सम्यक्प्रकृति उसे कहते हैं जिसके उदयसे यथार्थ तत्त्वोंका श्रद्धान चलायमान या मलिनरूप हो जाय।

चारित्रमोहनीयके २ भेद हैं:—कषाय और नोकषाय।

कषायमोहनीयके १६ भेद हैं—अनंतानुबंधी क्रोध, अनंतानुबंधी मान, अनंतानुबंधी माया, अनंतानुबंधी लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण मान, अप्रत्याख्यानावरण माया, अप्रत्याख्यानावरण लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण मान, प्रत्याख्यानावरण माया, प्रत्याख्यानावरण लोभ; संज्वलन क्रोध, संज्वलन मान, संज्वलन माया, संज्वलन लोभ।

अनंतानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हें कहते हैं जो आत्माके सम्यग्दर्शन गुणका घात करे। जबतक ये कषायें रहती हैं सम्यग्दर्शन नहीं होता।

अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, उन्हें कहते हैं जो आत्माके देशचारित्रको घाते अर्थात् जिनके उदयसे श्रावकके १२ व्रत पालन करनेके परिणाम न हों।

प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हे कहते हैं जो आत्माके सकलचारित्रको घाते अर्थात् जिनके उदयसे मुनियोंके व्रतपालन करनेके परिणाम न हों।

संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ उन्हे कहते हैं जो आत्माके यथाख्यातचारित्रको घातें अर्थात् जिनके उदयसे चारित्रकी पूर्णता न हो।

नोकषाय (किंचित्कषाय) के ९ भेद हैं:—हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद।

हास्य उसे कहते हैं जिसके उदयसे हँसी आवे।

रति उसे कहते हैं जिसके उदयसे प्रीति हो।

अरति उसे कहते हैं जिसके उदयसे अप्रीति हो।

शोक उसे कहते हैं जिसके उदयसे संताप हो।

भय उसे कहते हैं जिसके उदयसे डर लगे।

जुगुप्सा उसे कहते हैं जिसके उदयसे ग्लानि उत्पन्न हो।

स्त्रीवेद उसे करते हैं जिसके उदयसे जीवके पुरुषसे रमनेके भाव हों।

पुंवेद उसे कहते हैं जिसके उदयसे स्त्रीसे रमनेके भाव हों।

नपुंसकवेद उसे हैं जिसके उदयसे स्त्री पुरुष दोनोंसे रमनेके परिणाम हों।

इस प्रकार १६ कषाय, ९ नोकषाय, ये २५ चारित्रमोहनीयकी और ३ दर्शनमोहनीयकी कुल मिलाकर २८ मोहनीयकर्मकी प्रकृतियाँ हैं।

आयुकर्मः—आयुकर्मके चार भेद हैंः—नरकआयु, तिर्यंच आयु, मनुष्यआयु, देवआयु।

नरकआयु उसे कहते हैं जो जीवको नारकीके शरीरमे रोक रक्खे।

तिर्यंचआयु उसे कहते हैं जो जीवको तिर्यंचके शरीरमें रोक रक्खे।

मनुष्यआयु उसे कहते हैं जो जीवको मनुष्यके शरीरमे रोक रक्खे।

देवआयु उसे कहते हैं जो जीवको देवके शरीरमे रोक रक्खे।

नामकर्म—इस कर्मकी ९३ प्रकृतियाँ हैंः—

४ गति (नरक, तिर्यंच मनुष्य, देव)—इस गति नामकर्मके उदयसे जीवका आकार नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवके समान बनता है।

५ जाति—एकइंद्रिय, दोयइन्द्रिय, तीनइंद्रिय, चारइंद्रिय, पाँचइंद्रिय,—इस जातिनामकर्मके उदयसे जीव एकइंद्रिय आदि शरीरको धारण करता है।

शरीर * (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण) —इस शरीरनामकर्मके उदयसे जीव औदारिक आदि शरीरको धारण करता है।

---

* औदारिकशरीर स्थूल शरीरको कहते हैं, यह शरीर मनुष्य तिर्यंचों के होता है। वैक्रियकशरीर देव, नारकी और किसी किसी ऋद्धिधारी मुनिके भी होता है। इस शरीरका धारी अपने शरीरको जितना चाहे घटा बढ़ा

३ आंगोपांग (औदारिक, वैक्रियक, आहारक,)—इस नाम कर्मके उदयसे हाथ, पैर, सिर, पीठ वगैरह अंग और ललाट, नासिका वगैरह उपांगका भेद प्रगट होता है।

४ निर्माण *—इस नाम कर्मके उदयसे आंगोपांगकी ठीक ठीक रचना होती है।

५ बंधन (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु आपसमें मिल जाते हैं।

६ संघात (औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस कार्माण)—इस नाम कर्मके उदयसे औदारिक आदि शरीरोंके परमाणु विना छिद्रके एकरूपमें मिल जाते हैं।

७ संस्थान (समचतुरस्रसंस्थान, न्यग्रोधपरिमण्डल-संस्थान स्वातिसंस्थान, कुब्जकसंस्थान, वामनसंस्थान

सकता है, और अनेक प्रकारके रूप धारण कर सकता है। आहारकशरीर छट्ठे गुणस्थानवर्ती उत्तम मुनिके होता है। जिस समय मुनिको कोई शंका होती हैं, उस समय उनके मस्तकसे एक हाथका पुरुषके आकारका सफेद रंगका पुतला निकलता है और वह केवली या श्रुतकेवलीके पास जाता है; पास जाते ही मुनिकी शंका दूर हो जाती है, और पुतला वापस आकर मुनिके शरीरमें प्रवेश हो जाता है, यही आहारकशरीर कहलाता है। तैजसशरीर वह है जिसके उदयसे शरीरमें तेज बना रहता है। कर्माणशरीर कर्मोंके पिंडको कहते हैं। तैजस, कार्माण ये दोनों शरीर हरएक संसारी जीवके हैं।

* निर्माणनामकर्मके २ भेद हैं:—१ स्थाननिर्माण, प्रमाणनिर्माण। स्थाननिर्माणनामकर्मसे अंगोपांगकी रचना ठीक ठीक स्थानपर होती है और प्रमाणनिर्माणनामकर्मसे अंगोपांगकी रचना ठीक ठीक नापसे।

हुंडकसंस्थान)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरकी आकृति यानी शकल सूरत वनती है।

समचतुरस्रसंस्थान नामकर्मके उदयसे शरीरकी आकृति ऊपर नीचे तथा बीचमें ठीक वनती है।

न्यग्रोधपरिमंडलनामकर्मके उदयसे जीवका शरीर वड़के पेड़की तरह होता है अर्थात् नाभिसे नीचेके भाग छोटे और ऊपरके वड़े होते हैं।

स्वातिसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीरकी शकल पहलेसे विलकुल उलटी होती है यानी नाभिसे नीचे अंग वड़े और ऊपरसे छोटे होते हैं।

कुब्जकसंस्थाननामकर्मके उदयले शरीर कुवड़ा होता है।

वामनसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीर वौना होता है।

हुंडकसंस्थाननामकर्मके उदयसे शरीरके अंगोपांग किसी खास शकलके नहीं होते हैं। कोई छोटा कोई वड़ा, कोई कम, कोई ज्यादह होता है।

६ संहनन (वज्रर्षभनाराचसंहनन, वज्रनाराचसंहनन, नाराचसंहनन, अर्द्धनाराचसंहनन, कीलकसंहनन, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन)—इस नामकर्मके उदयसे हाड़ोंका वन्धनविशेष होता है।

वज्रर्षभनाराचसंहनन नामकर्मके उदयसे वज्रके हाड़ वज्रके वेठन और वज्रकी कीलियाँ होती हैं।

वज्रनाराचसंहनननामकर्मके उदयसे वज्रके हाड़ वज्रकी कीली होती हैं, परन्तु वेठन वज्रके नहीं होते हैं।

नाराचसंहनननामकर्मके उदयसे हड्डियोंमें वेठन और कीले लगी होती हैं।

अर्द्धनाराचसंहनननामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी संधियाँ आधी कीलीत होती हैं, यानी एक तरफ तो कीले लगी होती हैं परन्तु दूसरी तरफ नहीं होती।

कीलकसंहनननामकर्मके उदयसे हड्डियोंकी सँधियाँ कीलोंसे मिली होती हैं।

असंप्राप्तासृपाटिकासंहनननामकर्मके उदयसे जुदी जुदी हड्डियाँ नसोंसे बँधी होती हैं, उनमे कीले नहीं लगी होती हैं।

८ स्पर्श (कड़ा, नर्म हलका, भारी, ठंडा, गरम, चिकना, रूखा)--इस नामकर्मके उदयसे शरीरमें कड़ा, नर्म, हलका भारी वगैरह स्पर्श होता है।

५ रस (खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला, चर्परा) इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे खट्टा मीठा वगैरह रस होते हैं।

२ गंध (सुगंध दुर्गंध)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे सुगंध या दुर्गंध होती हैं।

५ वर्ण (काला, पीला, नीला, लाल, सफेद)—इस नामकर्मके उदयसे शरीरमे काला, पीला, वगैरह रंग होते हैं।

४ आनुपूर्व्य, (नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव)—इस नामकर्मके उदयसे विग्रहगतिमे यानी मरनेके पीछे और जन्मसे पहले रास्तेमें मरनेसे पहलेके शरीरके आकारके आत्माके प्रदेश रहते हैं।

१ अगुरुलघु—इस नामकर्मके उदयसे शरीर न तो ऐसा

भारी होता है जो नीचे गिर जावे, और न ऐसा हलका होता है जो आककी रुईकी तरह उड़ जावे।

१ उपघात—इस नामकर्मके उदयसे ऐसे अंग होते हैं जिनसे अपना घात हो।

१ परघात—इस नामकर्मके उदयसे दूसरेका घात करनेवाले अंगोपांग होते हैं।

१ आताप—इस नामकर्मके उदयसे आतापरूप शरीर होता है।

१ उद्योत—इस नामकर्मके उदयसे उद्योतरूप शरीर होता है।

१ विहायोगति (शुभ अशुभ)—इस नामकर्मके उदयसे जीव आकाशमें गमन करता है।

१ उच्छ्वास—इस नामकर्मके उदयसे जीव श्वास और उच्छ्वास लेता है।

१ त्रस—इस नामकर्मके उदयसे दो इंद्रिय आदि जीवोंमें जन्म होता है अर्थात् दो इंद्रिय, तीन इंद्रिय, चार इंद्रिय, अथवा पाँच इंद्रिय होता है।

स्थावर—इस नामकर्मके उदयसे पृथिवी, जल, अग्नि, वायु अथवा वनस्पतिमे अर्थात् एक इंद्रियमें जन्म होता है।

१ वादर—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे दूसरेको रोकनेवाला और स्वयं दूसरेसे रुकनेवाला शरीर होता है।

सूक्ष्म—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे ऐसा बारीक शरीर होता है जो न तो किसीसे रुकता और न किसीको

रोकता है। लोहे, मिट्टी, पत्थरके बीचमेंसे होकर निकल जाता है।

पर्याप्ति—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे अपने योग्य अपने आहार, शरीर, इंद्रिय श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन इन पर्याप्तियोंकी पूर्णता हो।

अपर्याप्ति—यह वह नामकर्म है जिसके उदयसे एक भी पर्याप्ति न हो।

१ प्रत्येक—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके स्वामी एक ही जीव होता है।

१ साधारण—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके स्वामी अनेक जीव होते हैं।

१ स्थिर—इस नामकर्मके उदयसे एक शरीरके धातु और उपधातु अपने अपने ठिकाने रहते हैं।

१ अस्थिर—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके धातु और उपधातु अपने ठिकाने नहीं रहते हैं।

१ शुभ—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके अवयव (हिस्से) सुंदर होते हैं।

---

१ एकेंद्रिय जीवके भाषा और मनके बिना ५ पर्याप्ति होती हैं। द्विइन्द्रिय त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असैनी पंचेन्द्रिय जीवके मनके बिना ५ पर्याप्ति होती हैं। सैनी पचेन्द्रिय जीवके छहों पर्याप्ति होती हैं।

२ अनंत निगोदिया जीवोंका एक ही शरीर होता है और उन सबका जन्म और मरण स्वास वगैरह लेना सब क्रियाएँ एक साथ होती है।

१ अशुभ—इस नामकर्मके उदयसे शरीरके अवयव (हिस्से) भद्दे होते हैं।

१ सुभग—इस नामकर्मके उदयसे दूसरे जीवोंको अपनेसे प्रीति होती है।

१ दुर्भग—इस नामकर्मके उदयसे दूसरे जीव अपनेसे अप्रीति वा वैर करते हैं।

१ सुस्वर—इस नामकर्मके उदयसे स्वर अच्छा होता है।

१ दुःस्वर—इस नामकर्मके उदयसे स्वर अच्छा नहीं होता है।

१ आदेय—इस नामकर्मके उदयसे शरीरपर प्रभा और कांति होती है।

१ अनादेय—इस नामकर्मके उदयसे शरीरपर प्रभा और कांति नहीं होती है।

१ यशःकीर्ति—इस नामकर्मके उदयसे जीवकी संसारमें प्रशंसा और कीर्ति (नामवरी) होती है।

१ अयशःकीर्ति—इस नामकर्मके उदयसे जीवकी कीर्ति नहीं होने पाती है।

१ तीर्थंकर—इस नामकर्मके उदयसे जीवको अरहंत पद मिलता है अर्थात् वह तीर्थंकर होता है।

गोत्र कर्म।

गोत्र कर्मके २ भेद हैं:—१ उच्चगोत्र २ नीचगोत्र।

उच्च गोत्र उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकमान्य ऊंचे कुलमें पैदा हो।

नीच गोत्र उसे कहते हैं जिसके उदयसे जीव लोकनिंदित अर्थात् नीच कुलमें पैदा हो।

अन्तराय कर्म।

अन्तराय कर्मके ५ भेद हैं:—१ दानअंतराय, २ लाभअंतराय, ३ भोगअंतराय, ४ उपभोगअंतराय, ५ वीर्यअंतराय।

दानअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे यह जीव दान न दे सके।

लाभअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे लाभ न हो सके।

भोगअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे अच्छे पदार्थोंका भोग न कर सके।

उपभोगअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे जेवर कपड़ों वगैरह चीजोंका उपभोग न करे।

वीर्यअंतरायकर्म उसे कहते हैं जिसके उदयसे शरीरमें सामर्थ्य यानी बल और ताकत न हो।

प्रश्नावली।

१ कर्म किसे कहते हैं? कर्मकी मूल और उत्तरप्रकृतियाँ कितनी हैं?

२ सबसे ज्यादह प्रकृतियाँ किस कर्मकी हैं? और सबसे कम किसकी?

३ अवधिज्ञान, अचक्षुदर्शन, सम्यग्दर्शन, संहनन, संस्थान, अगुरुलघु, आहारकशरीर, जुगुप्सा, सम्यक्प्रकृति, प्रचलाप्रचला, विग्रहगति, मतिज्ञान, नोकषाय, अनूपूर्व्य, साधारण, अनादेय, इनसे क्या समझते हो?

४ सुभग, अस्थिर, नाराचसंहनन, स्वातिसंस्थान, वीर्यअन्तराय, तीर्थंकर, अप्रत्याख्यानकषाय, स्त्यानगृद्धि, इन कर्मप्रकृतियोंके उदयसे क्या होता है?

५ संस्थान और संहनन किस किसके होते हैं? नीचे लिखे हुओंके संस्थान, संहनन हैं या नहीं? अगर हैं तो कौन कौनसे? देव, कुबड़ा, मनुष्य, स्त्री, राममूर्ति, मच्छी, शेर, साँप, नारकी, मक्खी।

६ ऐसे कर्म बतलाओ जिनकी प्रकृतियोंपर ६ का भाग पूरा पूरा चला जाय?

७ नामकर्मकी ऐसी प्रकृतियाँ बताओ जो एक दूसरेसे उलटी हैं?

८ निम्न लिखित प्रकृतियोंका उदय किन किनके होता है? समचतुरस्र-संस्थान, अपर्याप्ति।

९ नीचे लिखे हुए प्रश्नोंके उत्तर दो—

(क) तुम पचेन्द्रिय क्यों हुए?
(ख) लोगोंको नींद क्यों आती है?
(ग) हमको अवधिज्ञान क्यों नहीं होता?
(घ) सम्यग्दर्शन कबतक नहीं होता?
(ङ) सब मनुष्य कुबड़े और बौने क्यों नहीं होते?
(च) हम आकाशमें क्यों नहीं चल फिर सकते?
(छ) देव अपना शरीर छोटा बड़ा कैसे कर सकते हैं?
(ज) हमको तमाम चीजें क्यों नहीं दिखलाई देतीं?
(झ) हम हर जगह क्यों नहीं जा सकते?

१० बताओ इनके किस किस कर्मप्रकृतिका उदय है?

(क) सोहन पढ़ते पढ़ते सो जाता है।
(ख) जयदेवी बड़ी डरपोक है?
(ग) गोविंद बहरा गूंगा और अन्धा है।
(घ) राममूर्ति बड़ा मोटा ताजा पहलवान है।
(ङ) राम सदा रोगी रहता है।
(च) मोहनसे सब ग्लानि करते हैं।
(छ) देवदत्त लखपती होनेपर भी किसीको एक पैसा तक नहीं देता, बड़ा कंजूस है।
(ज) कान्ह भंगीके घर पैदा हुआ है।

(झ) देवी कुबड़ी है उसका भाई बौना है।

(ञ) देव आकाशमे गमन करते हैं।

(ट) गुलाब बहुत अच्छा गाता है, उसका स्वर अच्छा है।

(ठ) गोपाल बड़ा भारी पडित है हर जगह लोग उसकी तारीफ करते हैं।

(ड) हरी बहुत हँसता है, पर उसकी बहन बहुत रोती है।

(ढ) मेरे अगोपाग सब ठीक हैं।

(ण) गंगारामका सर लम्बोतरा, नाक चपटी और आँखे अदरको दबी हुई हैं।

(त) लाल अपने भाई पालको बहुत प्यार करता है।

समाप्त

वालकोपयोगी पुस्तकें

१ वालवोध जैन धर्म पहला भाग .... -)॥

२ वालवोध जैन धर्म दूसरा भाग .... =)

३ वालवोध जैन धर्म तीसरा भाग .... ≡)॥

४ वालवोध जैन धर्म चौथा भाग .... ।≡)

५ **रत्नकरण्डश्रावकाचार**—पं० पन्नालालजी वाकलीवाल कृत अन्वय, अर्थ और भावार्थ सहित .... ।=)

६ **द्रव्यसंग्रह**—अन्वय, अर्थ और भावार्थ सहित ।-)

७ **जैनसिद्धान्तप्रवेशिका**—स्याद्वादवारिधि पं० गोपालदासजी वरैया रचित। जैनसिद्धान्तमें प्रवेश करनेवालोंके लिये यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। ।≡)

८ **मोक्षशास्त्र**—अर्थात् तत्त्वार्थसूत्रकी पं० पन्नालालजी वाकलीवालकृत वालवोधिनी सरस हिन्दीभाषाटीका .... ।।।)

९ **आदिनाथस्तोत्र**—अर्थात् भक्तामरस्तोत्रका पं० नाथूरामजी प्रेमीकृत सरल हिन्दी पद्यानुवाद और अन्वयार्थ ।-)

१० **जैनशतक**—पं० भूधरदासजीकृत बड़े ही सार गर्भित १०७ कवित्त, सवैया दोहा आदिका संग्रह .... ।)

११ **चर्चाशतक**—पं० द्यानतरायजीने इसमें त्रैलोक्यसार और गोमट्टसार आदिका सार सवैया कवित्त छप्पय आदिमें वर्णन किया है। उसकी सरल हिन्दी टीका पं० नाथूरामजी कृत है १।)

मिलनेका पताः—

मैनेजर—जैन-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय

हिराबाग, पो० गिरगांव—बम्बई।